चन्दामामा
जनवरी १९८२

तितली रानी, तितली रानी, आओ हमारे संग
बाग़ हमारा देखो, देखो फूलों के रंग
पंखों पर तुम्हारे हम जॅम्स सजाएँगे
आज तुमको जॅम्स की तितली बनाएँगे
GEMS
कितनी मधुर कल्पना,
झट ले आओ जॅम्स अपना!
कॅडबरिज़
चॉकलेट्स
कॅडबरिज़ जॅम्स हैं ही ऐसे, मीठी मीठी कल्पनाओं जैसे!
OBM/6642/HN
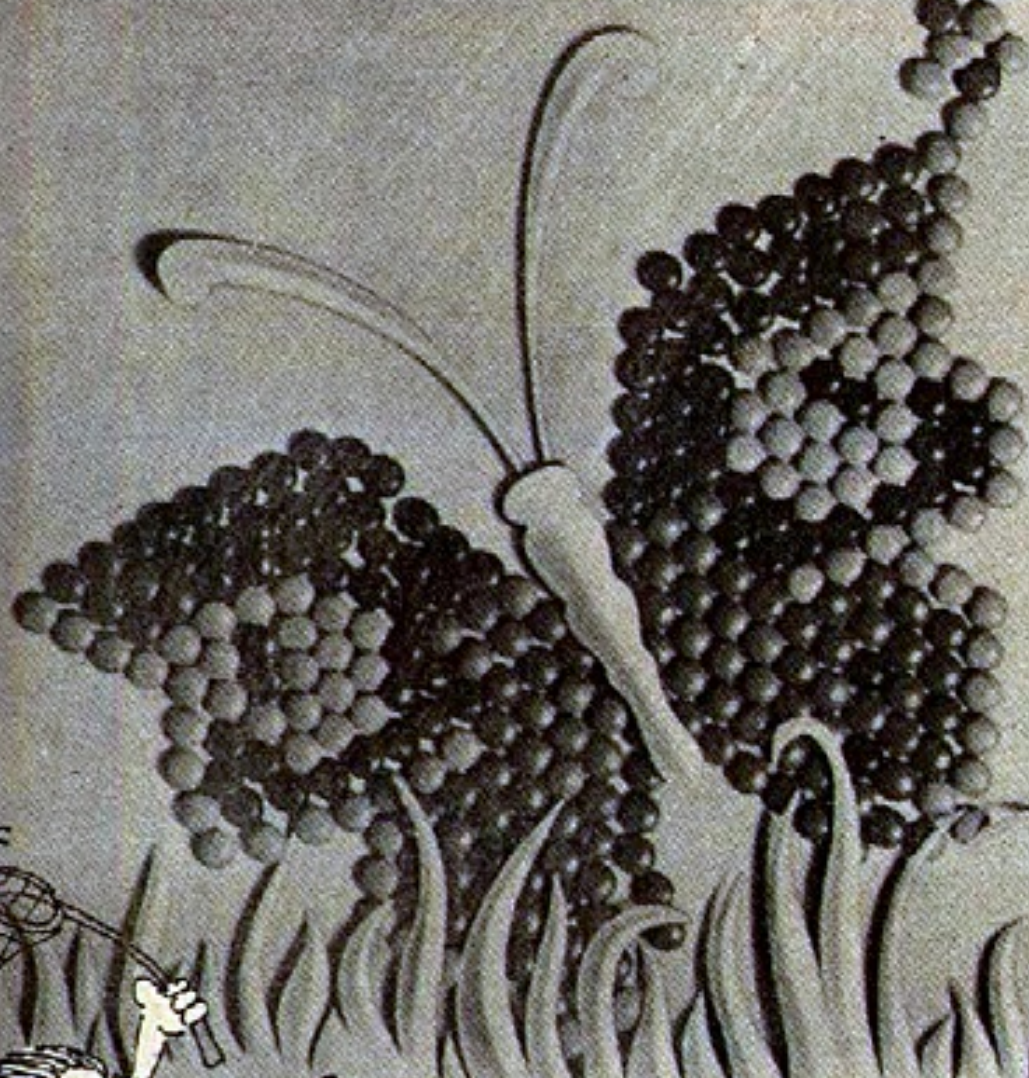
चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'

संचालक : नागिरेड्डी

इस महीने की बेताल कथा "राजयोगी" है। जादू का सपना नामक कहानी के द्वारा हमें यह मालूम होता है कि एक प्रकार के अंध विश्वासों के लिए उन व्यक्तियों के निजी अनुभव कारण भूत बन जाते हैं। ऐसे व्यक्तियों द्वारा लौकिक व्यवहारों से कैसे परोपकारी कार्य करा सकते हैं।

अमर वाणी

सर्पः क्रूरः खलः क्रूरः, सर्पात क्रूरतरः खलः।
मंत्रौषध वशः सर्पः, खलः केनी निवार्यंते ॥

[क्रूरता में जहरीले सांप और दुष्ट के बीच कोई अंतर नहीं होता, लेकिन साँप के डसने पर मंत्र आदि औषधों के द्वारा इलाज संभव है, लेकिन दुष्ट के तहत यह संभव नहीं है।]

वर्षः ३४ जनवरी १९८२ अंकः ५

एक प्रतिः १-७५ :: वार्षिक चन्दाः २१-००

बावरा गोविंद

गोविंद अपने भाइयों के बीच सब से छोटा है। वह अपने और भाइयों से पढ़ने-लिखने में तेज निकला। गुरुजी ने बताया कि वह बड़ा ही अक़्लमंद लड़का है। मगर बचपन से ही उसके व्यवहारों से परिचित उसके बड़े भाइयों ने अपने पिता से कहा—"भले ही यह अक्लमंद क्यों न हो, यह दुनियादारी का ज्ञान बिलकुल नहीं रखता। ऐसा व्यक्ति राज दरबार की नौकरी को छोड़ अन्य किसी प्रकार के काम के लिए नालायक़ है। इसलिए इसको दरबार में कोई नौकरी दिलवाइये।"

पर इस बात को गोविंद ने नहीं माना। उसने अपने पिता से कहा—"वैसे राज दरबार में नौकरी करना मैं ज़रूर पसंद करूँगा, लेकिन इस बात का फ़ैसला होने के बाद ही मैं उस नौकरी में प्रवेश करूँगा कि मैं सब तरह के काम करने में सफल सिद्ध हो सकता हूँ या नहीं! इसलिए मुझे एक साल तक खेतीबारी करने का मौक़ा दीजिए।"

इस पर पिता ने गोविंद को पांच एकड़ जमीन दे दी। गोविंद ने उस जमीन की मिट्टी की जांच की कि उस जमीन में कौन सी फसल अच्छी तरह से हो सकती है, वही फसल बोया। उसके खेत में बड़ी अच्छी पैदावर हुई।

गोविंद ने उसी वक़्त अपनी सारी पैदावर बेच कर रुपये जमा किया। मगर इस खुशी में आकर उसने सारा धन खर्च किया कि उसने सब से ज़्यादा धन कमाया है। फिर से नई फसल बोने के लिए उस के हाथ एक भी कौड़ी नहीं बची। मगर उस से कहीं कम जमीन में थोड़ी सी फसल पैदा करने वाले लोग भी सुखी थे।

इसका कारण यह था कि बाक़ी लोगों ने अपनी फसल के अच्छे दर मिलने तक

रुक कर अपनी पैदावर बेच डाली। उन लोगों ने अपने खेत में एक ही तरह की फसल पैदा करने के बजाय परिवार के लिए आवश्यक दूसरे क़िस्म की फसलें भी पैदा कीं। गोविंद ने अपनी सारी फसलें बेच डाली थी, इस वजह से अपने लिए आवश्यक धान वगैरह चीजें भी दुगुने दाम पर उसे खरीदनी पड़ी।

इस पर उसके बड़े भाइयों ने अपने पिता को समझाया—"हमने पहले ही बताया था कि यह तो एक दम बावरा है, इसलिए इसको जल्दी कोई नौकरी दिलाइये।"

गोविंद ने अपने पिता के पैर पकड़ कर गिड़गिड़ाया—"बाबूजी, खेतीबारी मेरी क़िस्मत के अनुकूल नहीं है। वह काम तो वे ही लोग कर सकते हैं जिनके बदन में ज्यादा ताक़त है। मैं तो बुद्धि-बल रखता हूँ। इसलिए मैं कोई व्यापार करूँगा। मुझे एक हज़ार रुपये दीजिए।"

पिता ने गोविंद को एक हज़ार रुपये दिये। रुपये हाथ लगते ही गोविंद ने इस बात का पता लगाया कि गाँव में कौन सी चीज किस दर से बिकती है और आस-पास के गाँवों में कौन चीज़ सस्ते में बिकती है। वहाँ से माल खरीद लाया। गाँव के और व्यापारियों से कम दर पर बेचने लगा। उसका व्यापार दिन ब दिन बढ़ता गया। वह यह सोचकर आश्चर्य में आ गया कि व्यापार करना कैसा आसान काम है। फिर क्या था, गोविंद ने दो-तीन महीनों के अन्दर अपने पिता से प्राप्त एक हज़ार रुपयों को दस हज़ार बनाया।

गोविंद जानता था कि उसके बड़े भाई सब जगह उसे बावरा बता कर मजाक़ उड़ाते हैं। इसलिए उसने अन्य व्यापारियों के पास जाकर पूछ-ताछ करना शुरू किया—"तीन महीनों के अन्दर मेरा मूल धन दस गुना बढ़ गया है। क्या आप सब को भी इसी तरह का फ़ायदा हो रहा है?"

लेकिन एक भी व्यापारी यह स्वीकार नहीं किया कि उन्हें इतनी अधिक मात्रा

में फ़ायदा हो रहा है। सबने यही जवाब दिहा—"हमारी समझ में नहीं आ रहा है कि तुम्हें इतना ज्यादा फ़ायदा कैसे मिल रहा है। हमें तो बड़ी मुश्किल से हमारी लागत वापस मिल रही है।"

गोविंद ने यही सोचा कि उसके जैसा अक्लमंद आदमी कहीं नहीं है। इस घमण्ड में आकर उसने जो कुछ कमाया, पानी की तरह खर्च कर डाला।

छे महीने बीत गये। एक दिन राज्य की ओर से कर वसूलने वाले अधिकारी ने आकर गोविंद से पूछा—"हमने सुना है कि व्यापार में तुम्हें खूब फ़ायदा हुआ है?"

"जी हां, इस गांव के अन्दर किसी को भी इतना ज्यादा फ़ायदा नहीं हुआ है।" गोविंद ने झट से जवाब दिया।

"तुम्हारे फ़ायदे का समाचार मुझ तक पहुंच गया है। तुम्हें राजा के लिए आय कर के रूप में तीस हज़ार रुपये चुकाना होगा।" अधिकारी ने कहा।

"आय कर कैसा?" गोविंद ने अचरज में आकर पूछा।

"तुम्हें जो फ़ायदा हुआ है, उस में से तीस प्रतिशत राजा को तुम्हें कर के रूप में चुकाना होगा। अब तक तुम्हें क़रीब एक लाख रुपयों का फ़ायदा हुआ है। इसका मतलब है कि तुम्हें तीस हज़ार कर चुकाना पड़ेगा। तुम्हारे जैसे दूसरे व्यापारियों को भी कर चुकाना पड़ता है। जल्दी कर चुका दो।" अधिकारी ने समझाया।

गोविंद को लगा कि उसका कलेजा फटता जा रहा है। तब जाकर उसकी समझ में बात आ गई कि दूसरे व्यापारियों ने फ़ायदा न होने की बात क्यों बताई?

इस के बाद गोविंद के पिता ने कर वसूलनेवाले अधिकारी को समझा कर भेज दिया, तब उसे बताया—"तुम्हारे बड़े भाइयों के कहे मुताबिक़ तुम सचमुच बावरे गोविंद हो! मेरे साथ राजधानी में चलो। वहां पर मैं तुम्हें कोई न कोई

नौकरी दिलाऊँगा।" गोविंद ने सर झुकाकर अपने पिता से कहा–"बाबूजी, मैं अपने लिए कोई न कोई नौकरी खुद पा सकता हूँ। हो सकता है कि झूठ बोलनेवाले पेशे में मैं सफल न हो सकूँ, लेकिन मैं अपनी बुद्धिमानी से राजा को प्रसन्न कर सकता हूँ।"

पिता ने पल भर सोच कर कहा–"अच्छी बात है, ऐसा ही करो। लेकिन एक बात याद रखो! बड़े आदमी के जरिये तुम राजा का आश्रय प्राप्त कर लो। यदि तुम इस काम में सफल न हो सकोगे तो मुझे खबर भिजवा दो। मैं खुद आकर तुम्हारी मदद करूँगा।" इसके बाद गोविंद राजधानी नगर में पहुँचा। उस दिन महाराजा महाकवि जगन्नाथ पंडित का स्वर्णभिषेक कर रहे थे। उस उत्सव को देखने गोविंद भी जा पहुँचा।

गोविंद ने वहाँ पर खुद अपनी आँखों से देखा कि राज्य के सभी प्रमुख व्यक्ति महाकवि को प्रणाम कर रहे हैं। राजा स्वयं एक थाली में स्वर्ण मुद्राएँ ले आये और पुरोहित मंत्र-पठन करने लगे। उस वक़्त राजा ने महाकवि जगन्नाथ पंडित का अभिषेक करके उनके चरणों में प्रणाम किया। महाकवि ने राजा को आशीर्वाद दे दिया। जयकारों से सभा गूँज उठी।

उस दिन शाम को गोविंद महाकवि जगन्नाथ के दर्शन करने गया। बड़ी
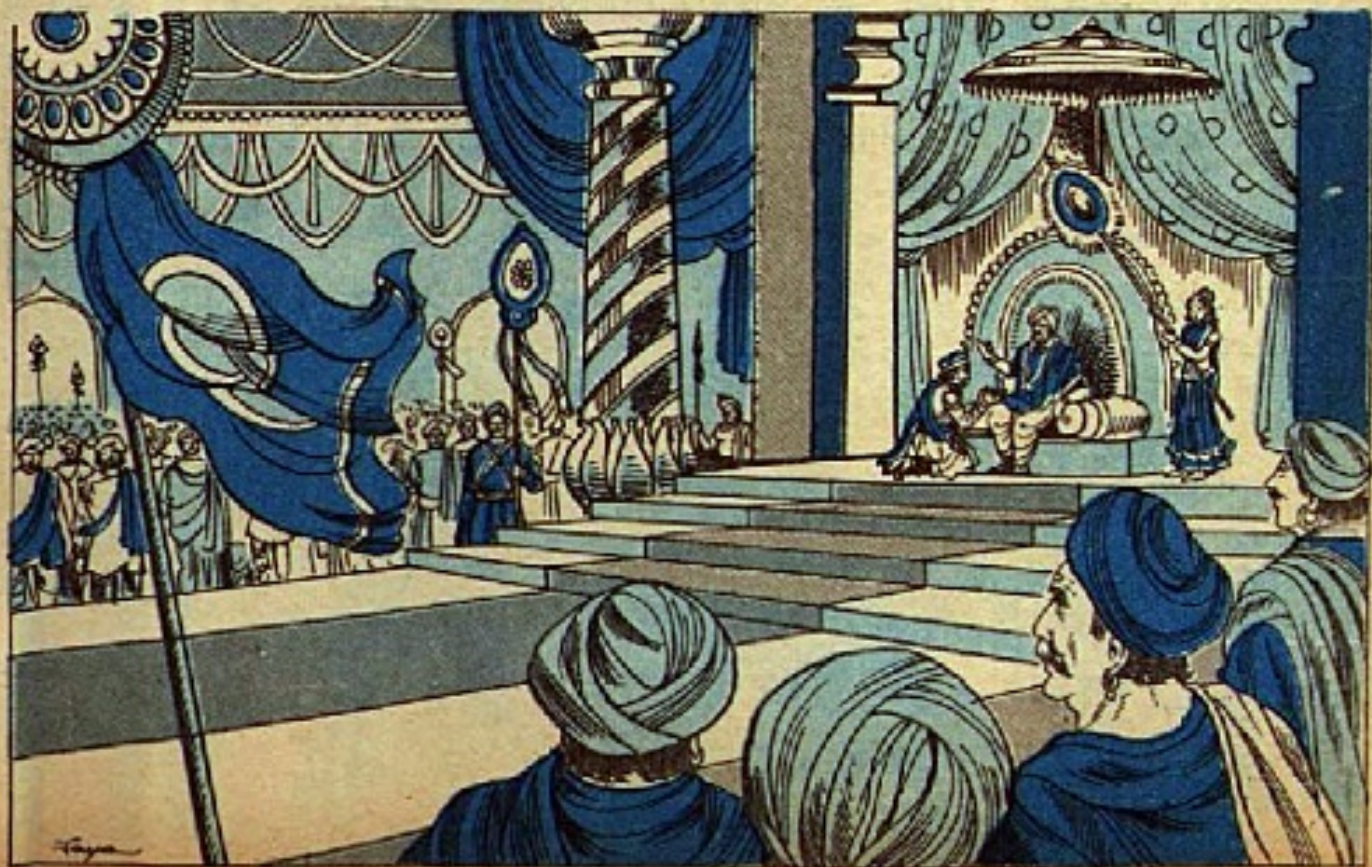
आसानी से उसे जगन्नाथ पंडित के दर्शन हुए। गोविंद ने बड़ी विनय के साथ उन्हें प्रणाम करके कहा—"महानुभाव, अगर मुझे आप मेरी बुद्धिमत्ता के प्रदर्शन करने का मौक़ा दिला दे तो मैं महान से महान व्यक्ति को भी प्रसन्न कर सकता हूं। मैं आप की सिफ़ारिश के द्वारा राजा के दरबार में नौकरी पाने की इच्छा रखता हूँ।"

जगन्नाथ पंडित आश्चर्य में आकर बोले—"बेटा, मैं नहीं जानता कि तुम कौन हो? पर मेरी नज़र में तुम बावरे लगते हो! यदि ऐसी बात न होती तो तुम राज दरबार में नौकरी पाने के लिए मेरे पास नहीं आते।"

गोविंद लज्जित हो कर बोला—"सभी लोग मुझे बावरे बताते हैं, आपने भी यही बात कही। लेकिन राजा के द्वारा स्वर्णाभिषेक करानेवाले आप जैसे बड़े व्यक्ति मुझे कहाँ मिल सकते हैं?" महाकवि हंस कर बोले—"पगले, क्या तुम यह बात नहीं जानते कि एक कवि का सम्मान करना राजा के लिए आदर का कारण बन जाता है। इसीलिए उन्होंने मेरा स्वर्णाभिषेक किया है। इससे बढ़ कर मेरे प्रति उनके मन में विशेष आदर का भाव नहीं है। यदि तुम सचमुच नौकरी पाना चाहते हो तो मंत्री के पास जाओ, सेनापति या विदूषक के पास जाओ! या नहीं, आखिर में राजा के नाई या धोबी भी तुम्हारी मदद कर सकते हैं! क्यों कि सम्मान का कार्य समाप्त हो जाने के बाद शायद राजा को भी इस बात का स्मरण न होगा कि मैं कौन हूँ और मेरा व्यक्तित्व क्या है?"

महाकवि के मुँह से ये बातें सुनने पर गोविंद को यह सारी दुनिया कुछ अजीब सी मालूम हुई। इस के बाद उसने अपने पिता के पास खबर भेज कर उनके द्वारा राज दरबार में नौकरी पाई और एक अजनबी के रूप में कई साल तक सुखपूर्वक अपनी ज़िंदगी बिताता रहा।

[२]

[सुख, शांति और संपदाओं से पूर्ण मराल देश का राजा मंदरदेव है। उसके पड़ोसी राज्य कुंडलिनी द्वीप में अराजकता फैल गई। नरवाहन मिश्र नामक सेनापति ने उस राज्य पर अधिकार कर लिया और मराल द्वीप पर अचानक हमला कर बैठा। उसी वक्त उसके भेदिये राजा मंदरदेव को बन्दी बनाकर ले जाने लगे। बाद...]

बादलों के गर्जन और बिजलियों की चमक के साथ मूसलधार वर्षा शुरू हो गई। समुद्र के किनारे के लंबे झाऊ तथा नारियल के पेड़ों को उखाड़ते हुए जोरदार आंधी चली। समुद्र के बीच प्राणों का मोह छोड़कर लड़ने वाले मराल तथा कुंड़लिनी द्वीपों के नौका दल तितर-बितर होने लगे। तब तक किनारे पहुँचे हुए कुंडलिनी द्वीप के सैनिक मराल द्वीप के योद्धाओं के साथ द्वन्द्व युद्ध करने लगे।

घोड़े पर एड़ लगाकर तेजी के साथ दौड़ाने वाले मंदरदेव के कानों में कुंडलिनी और मराल द्वीप के सैनिकों की चिल्लाहटें गूँजने लगीं। "जय कुंडलिनी देवी की।" कहकर भयंकर गर्जन करने वाले कुंडलिनी द्वीप के सैनिकों का "जय मराली देवी की!" चिल्लाते हुए नारे लगानेवाले

मराल द्वीप के सैनिक सामना करने लगे। आसमान में हवा के झोंके खाकर काले बादल छंटने लगे, बिजलियों की कड़कड़ाहट तथा चमक और बादलों की तड़क से पृथ्वी और आकाश गूंज उठे।

उस हालत में मंदर देव ने अपने मन में सोचा—"अब मुझे अपने राज्य से हाथ धोना पड़ेगा!" वह अब किसी प्रकार का प्रयत्न करने पर भी बच कर भाग नहीं सकता था! द्रोही अंगरक्षकों के साथ लड़ने के लिए उसके हाथ में कोई हथियार तक बचा न था। इस विपदा से बचने का उपाय सोचने वाले मंदर देव के कानों में "जय मराल देवी की" भयंकर ध्वनि टकरा गई। इस पर वह चकित हो चारों तरफ़ देखता रह गया।

ये ध्वनियाँ करने वाले सैनिक वे लोग थे जो मंत्री के द्वारा राजा मंदर देव की रक्षा करने केलिए भेजे गये थे। वे लोग वायु वेग से अपने घोड़ों को दौड़ाते मंदरदेव को बन्दी बनाने वाले द्रोहियों के समीप पहुँच रहे थे। उन ध्वनियों को सुनकर मंदर देव ने पीछे मुड़कर देखा। दूसरे ही क्षण आँखों को चौंधियाने वाली कांति तथा कान के पर्दों को फोड़ने वाली भारी आवाज़ के साथ अचानक बिजली गिर गई। पल भर में मदरदेव ने आँख खोलकर देखा। द्रोही अंगरक्षक जमीन पर गिरकर छटपटा रहे थे। उन का एक घोड़ा मौत की पीड़ा से दम तोड़ते छटपटा रहा था। दूसरा घोड़ा आंधाधुंध दौड़े चला जा रहा था।

मंदरदेव झट से अपने घोड़े पर से कूद पड़ा। इस बीच उसकी रक्षा के लिए आये हुए चार सैनिक वहाँ पर आ पहुँचे। सबने दम तोड़ने वाले अंगरक्षकों की ओर क़दम बढ़ाये।

मौत के मुँह में जाने वाला एक अंगरक्षक मंदरदेव की ओर हाथ उठाकर इशारा करने लगा। जब मंदरदेव उसके समीप जाकर बैठा, तब वह हाँफते हुए क्षीण स्वर

में बोला–"महाराज, हम दोनों ने आपके प्रति द्रोह करना चाहा, मगर सच्ची बात यह है कि हमने किसी प्रकार के धन के लोभ में पड़कर यह कार्य करने को नहीं माना। नीच नरवाहन मिश्र न हमारे पास खबर भेजी कि अगर इस कार्य में हम उसकी मदद न करेंगे तो वह हमारे परिवारों का सर्वनाश कर बैठेगा। आप जानते होंगे कि हम कुंडलिनी द्वीप के निवासी हैं। हम इस वक़्त अपने द्रोह का प्रायश्चित्त कर ही रहे हैं। मगर आपके प्रति हमने जो द्रोह किया है, उस के बदले में मैं आपकी एक मदद करना चाहता हूँ। यदि आप किसी कारण से इस द्वीप को छोड़ना चाहेंगे तो यहाँ से थोड़ी दूर पर नारियल के वन के उस पार किनारे से लग कर दो नाव हैं!" ये शब्द कहते उस अंगरक्षक ने अपने प्राण त्याग दिये।

मंदरदेव ने उठकर अपने क़िले की ओर नज़र दौड़ाई। क़िले के बुर्जों पर खड़े हो सैनिक कंदकों की ओर तीर बरसा रहे हैं। कुछ लोग दुश्मन का अंत करने और अपने किले की रक्षा करने के ख्याल से बड़ी-बड़ी चट्टानों को नीचे की ओर लुढ़का रहे हैं। कुंडलिनी द्वीप के सैनिक सीढ़ियों की मदद से क़िले की दीवारों पर चढ़ने की कोशिश कर रहे हैं।

मंदरदेव ने भांप लिया कि उसके सैनिकों की हालत शोचनीय है! उस भयंकर तूफान के बीच भी कुंडिलिनी

द्वीप के सैनिक अपने सैनिकों को हराकर क़िले को घेरे हुए हैं! इस वक़्त वह शत्रु सैनिकों के पीछे के हिस्से में है। चार सैनिकों की मदद से पीछे से दुश्मन का सामना करना उस के लिए आत्महत्या के समान है। इन्हीं विचारों में मंदरदेव पशोपेश में पड़ा हुआ था, तभी अग्नि पर्वत के फूटने जैसी भयंकर ध्वनि हुई। दूसरे ही क्षण मंदरदेव को लगा कि उसके पैरों के नीचे की जमीन कांप रही है। तब उसे क़िले का एक बुर्ज हवा में उड़कर नीचे गिरते दिखाई दिया। सैनिकों के हाहाकार और चिल्लाहटें आसमान को गुंजा देने लगीं। वह एक भयंकर दृश्य था।
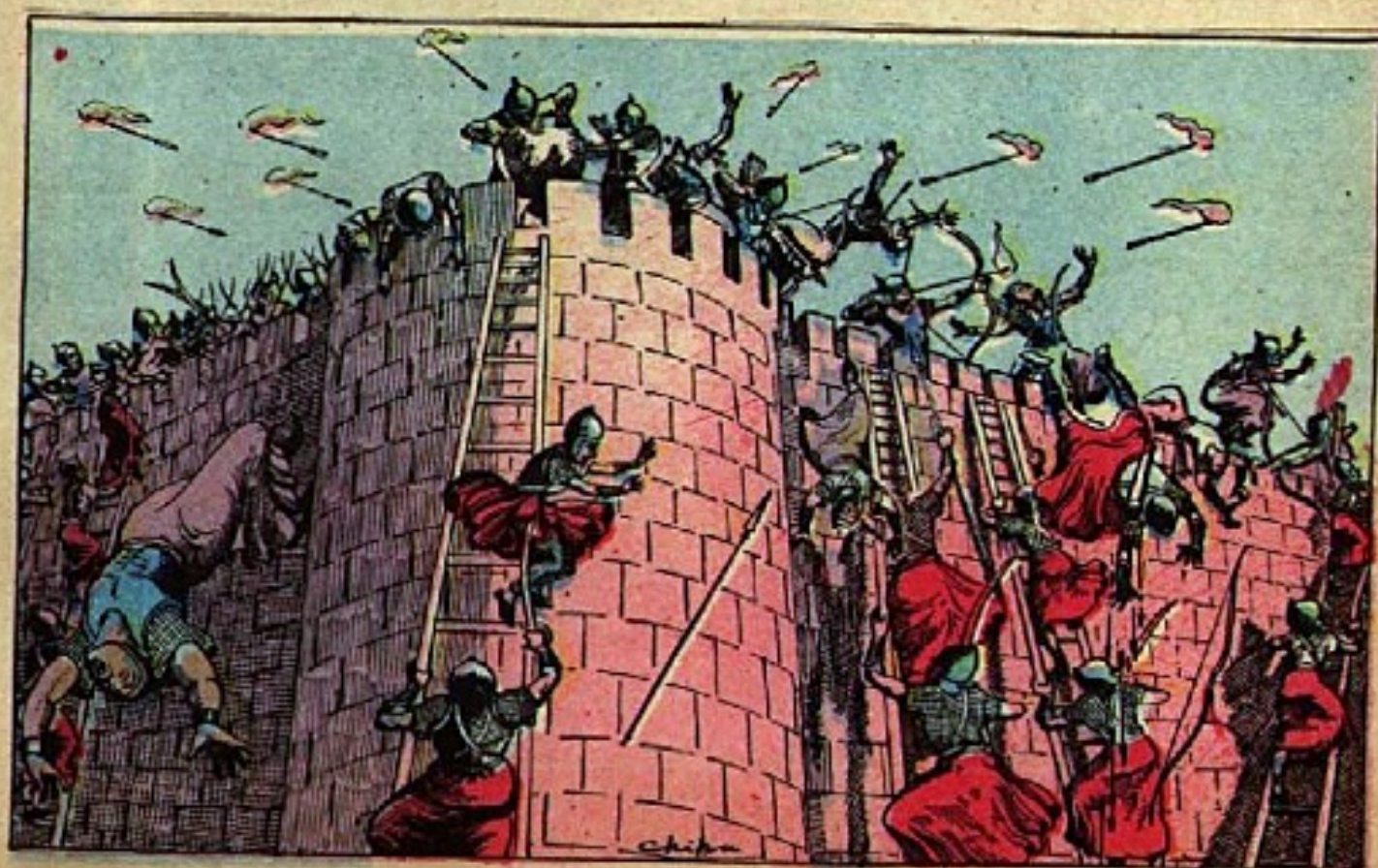
इस पर मंदरदेव ने अपने सैनिकों से कहा–"अब हमारा सर्वनाश हो गया है! बारूद लगाकर कुंडलिनी द्वीप के सैनिकों ने हमारे क़िले की दीवार को तोड़ डाला है। अब हमारी पराजय मिनटों में होने वाली है।"

"जी हाँ, महाराज! इस में कोई शक नहीं है!" ये शब्द कहते चारों सैनिकों ने अपने मस्तक झुका लिये।

इसके बाद राजा मंदरदेव इस निश्चय पर पहुँचा कि अब उसे मराल द्वीप को छोड़ना लाजमी है! जब दुश्मन ने क़िले की एक दीवार को तोड़ डाला, तब उस पर क़ब्जा करना उस केलिए कोई मुश्किल की बात नहीं है! इसके बाद दुश्मन उसकी खोज करेगा। अगर वह उनके हाथों में बन्दी बना तो नाना प्रकार की यातनाएँ उसे भले ही न दें, पर उस दुष्ट और क्रूर नरवाहन मिश्र के हाथों में उसका अपमान निश्चित है।

यों विचारकर मंदरदेव बोला–"चलो, उस द्रोही अंगरक्षक ने नावों की जो बात कही, शायद वह सच निकले? यदि मराल देवी की हम पर कृपा है तो हम सुरक्षित किसी दूसरे द्वीप में पहुँच भी सकते हैं। क़िस्मत ने साथ दी तो उस देवी की मदद से हम लोग फिर से मराल द्वीप पर विजय भी पा सकते हैं।"

सैनिकों ने चिंतापूर्ण चेहरे लिये क़िले की ओर देखा। बुर्ज के ऊपर से शत्रु सैनिकों का सामना करनेवाले मराल सैनिकों का अब कहीं पता तक न था। कुडलिनी द्वीप के सैनिक सीढ़ियों की मदद से अब निर्भय होकर क़िले की दीवारों पर चढ़ रहे थे।

मंदरदेव अब निश्चंत और गंभीर होकर आगे बढ़ा। उसे बेहथियार देख सैनिकों में से एक ने मृत अंगरक्षक की तलवार उठा कर राजा के हाथ थमा दी। इस के बाद वे सब समुद्र के किनारे के नारियल के पेड़ों के बगीचे की ओर चल पड़े। बादलों के गर्जन व बिजलियों की कड़क के साथ मूसलधार वर्षा अब भी हो रही थी।

निराशा के मारे सर झुकाये चलनेवाले राजा मंदरदेव तथा सैनिक भी थोड़ी दूर पर कोलाहल की ध्वनि सुनकर पीछे की ओर मुड़े। क़िले की ओर से उनकी ओर तेजी के साथ बढ़ने वाले कुछ घुड़सवारों को उन लोगों ने देखा। दूसरे ही क्षण मंदरदेव ऊँची आवाज़ में बोला–"लो, देखो, वे लोग कुंडलिनी द्वीप के सैनिक हैं। हमें बन्दी बनाने के लिए इसी ओर चले आ रहे हैं। इस मैदान में हमारे द्वारा उन घुड़सवारों का सामना करना खतरे से खाली नहीं है। हमें तुरंत उस नारियल के बगीचे के अन्दर जाना सब तरह से बेहतर है।" यों चेतावनी देकर मंदरदेव उस दिशा में दौड़ने लगा। सैनिक भी अपने राजा का अनुसरण करने लगे। सब लोग नारियल के बगीचे में पहुँचकर पेड़ों की ओट में छिप गये और क़िले की ओर ताकने लगे। कुड़लिनी द्वीप के अश्वारोही उसी दिशा में बढ़े चले आ रहे थे। मंदरदेव ने तलवार खींचकर समीप के समुद्र की ओर देखा। द्रोही अंगरक्षक के कहे मुताबिक़ वहाँ पर दो नाव पानी में तिर रही थीं। मंदरदेव के मन में हठात् यह विचार पैदा हुआ कि एक ही छलांग में नावों के पास पहुंचकर समुद्र मार्ग पर

यात्रा करना कहीं हितकर तो नहीं है? लेकिन जब उसने दूसरी दिशा में अपनी नज़र दौड़ाई तो देखता क्या है, दस-पंद्रह दृढ़ काय अश्वारोही नारियल के बगीचे के समीप पहुँच रहे हैं। उनके हाथों में चमकने वाली तलवारें लहरा रही हैं।

मंदरदेव ने गंभीर होकर अपने सैनिकों को चेतावनी दी–"अब या तो हमारी विजय होगी या हम वीर स्वर्ग को प्राप्त होंगे।" इस चेनावनी के साथ मंदरदेव तलवार खींचकर खड़ा हो गया। उस के सैनिक भी नलवार खींचे पेड़ों की ओट में ताक लगाये चौकन्ने हो गये। कुंडलिनी द्वीप के सैनिकों को पता न था कि उनके दुश्मन किस पेड़ के पीछे छिपे हैं। इसलिए वे अंधा-धुंध अपने घोड़ों को दौड़ाते पेड़ों के बीच आ पहुँचे! "जय मराल देवी की!" नारे लगाते मंदरदेव शेर की भांति आगे बढ़ा और एक शत्रु सैनिक का सर काट डाला।

मंदरदेव का सिंह गर्जन सुनकर शत्रु सैनिकों के कलेजे कांप उठे। संकरीले पेड़ों के बीच दुश्मन अपने घोड़ों को इच्छानुसार घुमा न पाये और वे घबराने लगे। यह अच्छा मौक़ा पाकर मंदरदेव तथा उसके सैनिक दुश्मन पर हमला करके उन्हें घायल करने लगे।

जब घुड़सवारों में से चार-पांच धराशायी हो गये, तब बाक़ी सैनिक अपने घोड़ों से उतरकर मंदरदेव तथा उसके सैनिकों से जूझ पड़े। देखते-देखते पेड़ों के बीच भीषण द्वन्द्व युद्ध शुरू हो गया। उस भयंकर लड़ाई में तलवारों की चोटें कभी दुश्मन के बदन पर पड़ने लगीं तो कभी पेड़ों के तनों पर।

एक-दो घड़ियों के बीच कुंडलिनी द्वीप के सैनिकों में से ज्यादा लोग काम आये। पेड़ों के पीछे छिपते अचानक हमला करते मंदरदेव तथा उसके सैनिक दुश्मन के कई सैनिकों का अंत कर पाये। वहाँ पर आये हुए सैनिकों में से ज्यादा लोग या तो मर

गये या बुरी तरह से घायल हो गये। इस पर बाक़ी सैनिकों की हिम्मत टूट गई और वे भागने लगे। "जय मराल देवी की!" चिल्लाते मंदरदेव तथा उसके सैनिक भागनेवाले दुश्मन के सैनिकों का पीछा करते कुछ लोगों को घायल बना पाये और बाक़ी लोगों को मार डाला।

इसके बाद थोड़ी ही देर में वहाँ पर शांति छा गई। आसमान में बिजलियों की कड़क तथा बादलों के गर्जन को छोड़ क़िले की ओर से किसी प्रकार का कोई कोलाहल सुनाई नहीं दे रहा था। जान बचाकर भागने वाले कुंडलिनी द्वीप के कुछ सैनिक अपने घोड़ों को नारियल के बगीचे में ही छोड़ दौड़ रहे थे। इस बीच क़िला दुश्मन के क़ब्जे में चला गया था। राज महल के समीप मराल द्वीप कें कुछ सैनिक दुश्मन का अभी तक सामना कर रहे थे।

इस लड़ाई में मंदरदेव तथा उसके सैनिक घायल तो जरूर हुए, मगर वे घाव खतरनाक न थे। मगर वे सब थक कर चूर-चूर हो गये थे।

इस पर मंदरदेव ने अपनी तलवार म्यान में रख दी, तब बोला-"अब हम लोगों का विलंब करना खतरनाक है!" यों समझाते वह क़िनारे पर स्थित नावों की ओर निकल पड़ा। चारों सैनिकों ने सर उठाकर एक बार अपने क़िले की ओर देखा, तब अपने राजा के पीछे चल पड़े।

द्रोही अंगरक्षक के कहे अनुसार दो नाव समुद्र के किनारे जरूर थीं, लेकिन वे समुद्र पर दूर की यात्रा के लिए उपयोगी न थीं। क्यों कि वे दोनों नावें छोटे किस्म की थीं। पाल की मदद से चलनेवाली नावें न थीं, उन्हें तो डांडों की मदद से ही चलाया जा सकता था।

मंददेव नावों के समीप पहुँचा, तब शायद उसके दिमाग में कोई उपाय सूझ पड़ा। इस पर उसने अपने सैनिकों की ओर मुड़कर देखा। (और है)

राजयोगी

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया। पेड़ से शव उतार कर कंधे पर डाल सदा की भांति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा, तब शव में स्थित बेताल ने कहा—" राजन, प्राचीन काल में योगी बने एक राजा संकोच की वजह से अपने दो भक्तों के बीच के झगड़े का निपटारा न कर पाये, मुझे लगता है कि आप भी किसी को नाखुश न करने के ख्याल से ऐसा दुस्साहस करने पर तुले हुए हैं। मैं आप को उस राजयोगी की कहानी सुनाता हूँ। श्रम को भुलाने के लिए सुनिये।"

बेताल यों सुनाने लगा: पुराने जमाने में चंपक देश पर राजा धीरवर्मा राज्य करते थे। उनके वीरवर्मा, शूरवर्मा तथा गुणवर्मा नामक तीन पुत्र थे। सबसे छोटा पुत्र गुणवर्मा आध्यात्मिक बातों पर ज्यादा अभिरुचि रखता था।

बेताल कथाएँ

थोड़े दिन बाद राजा धीरवर्मा का देहांत हो गया। इस पर बड़े राजकुमार वीरवर्मा के राज्याभिषेक की तैयारी होने लगी। तब दूसरा राजकुमार शूरवर्मा गद्दी पर अधिकार पाने के लिए षडयंत्र रचने लगा। इस बात का पता वीरवर्मा को उसके अनुचरों के द्वारा चला। इस बात को लेकर दोनों राजकुमारों के बीच झगड़ा शुरू हुआ और आखिर आपस में लड़कर दोनों खतम हो गये।

इसे देख छोटे राजकुमार गुणवर्मा के मन में वैराग्य भाव पैदा हुआ और वह किसी से कहे बगैर उसी रात को राजधानी को छोड़ कहीं चला गया। कई वर्ष तक देशाटन करके अनेक साधू और सन्यासियों से मिले, उनके द्वारा आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त किया।

आखिर उसने शंखवर नामक ग्राम के समीप के जंगल को अपनी तपस्या के लिए बड़ा ही अनुकूल समझा और वहीं पर बैठकर शांतिपूर्वक अपनी तपस्या शुरू की।

कुछ वर्षों के अन्दर उस पर बांबियाँ निकल आईं। इस बीच उस गाँव के कुछ लोग जंगल के उस प्रदेश में पहुँचे। वहाँ की जमीन को खेती के लायक़ बनाने के ख्याल से खोदने लगे। जंगल के पेड़ों को काटते-काटते गुणवर्मा के रहनेवाली बांबी के पास गये और उसे समतल बनाने के इरादे से जब उसे खोदने लगे, तब उसके अन्दर उन्हें गुणवर्मा दिखाई दिया। इस हलचल की वजह से गुणवर्मा का ध्यान भंग हुआ।

गाँव के लोगों ने डर के मारे हाथ जोड़कर गुणवर्मा को प्रणाम किया। पर वह नाराज़ नहीं हुआ। गाँव वालों को गुणवर्मा के चेहरे पर कोई अद्भुत तेज दिखाई दिया।

इस पर उन लोगों ने उसी वक़्त एक छोटी-सी झोंपड़ी बनाई और गुणवर्मा को उसमें पहुँचा दिया।

उस दिन से शंखवर ग्राम के लोग अक़्सर गुणवर्मा के दर्शन करने आने लगे। आसपास के गाँवों में यह खबर फैल गई कि एक बार उनके दर्शन करने पर लोगों का उपकार होता है। लोगों ने उनसे पूछा कि वे गाँव में चले आये और उनके बीच रहते उन्हें ज्ञान का उपदेश दें। उनकी प्रार्थना को गुणवर्मा ने मान लिया।

शंखवर गाँव का सबसे बड़ा किसान दिलावर सिंह था और सबसे बड़ा धनी जगत सिंह था। वे दोनों न केवल गुणवर्मा के बड़े भक्त बने, बल्कि उनके ठहरने के लिए गाँव के बीच अच्छे भवन बनाकर दिये, इस तरह शंखवर में एक छोटा-सा आश्रम ही तैयार हो गया। भक्त लोग दल बांधकर आने लगे। आश्रम के सारे कार्यक्रमों की देखरेख वे ही दोनों करने लगे।

धीरे-धीरे उन्हें गुणवर्मा के उपदेशों से कहीं ज्यादा आनंद-आश्रम के संचालन के अधिकार में मिलने लगा। थोड़े ही दिनों में उनके बीच की दोस्ती बिगड़ती गई और अधिकार के लिए संघर्ष शुरू हुआ। एक दिन गुणवर्मा अपने भक्तों को दर्शन दे रहे थे, तब दिलावर सिंह ने उन्हें बताया–"जगत सिंह धोखेबाज हैं, आश्रम के संचालन के मामलों से उन्हें दूर रखना अच्छा है।"

इसके बाद जगत सिंह ने गुप्त रूप से दिलावर सिंह के बारे में गुणवर्मा से यही बात कही।

उस दिन रात को बहुत देर तक सोच-विचार करने के बाद गुणवर्मा आश्रम को छोड़ कहीं चले गये।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा–"राजन, गुणवर्मा का व्यवहार मुझे कुछ बेमतलब का मालूम होता है! उनके प्रति बड़ी श्रद्धा और भक्ति रखने वाले दिलावर सिंह तथा जगत सिंह के बीच के झगड़े का निवारण करके आश्रम के

संचालन की जिम्मेदारी उन दोनों में से योग्य व्यक्ति के हाथ सौंप देना गुणवर्मा का कर्तव्य था। लेकिन इस जिम्मेदारी से घबराकर चुपचाप भाग जाने में गुणवर्मा का उद्देश्य क्या था? दोनों उनके भक्त ही थे, इसलिए क्या उस झगड़े का फ़ैसला करने में संकोच का अनुभव करके बचकर भाग जाना न्याय संगत कहलाता है? इस संदेह का समाधान जानकर भी न दोगे तो आपका सर टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा।"

इस पर विक्रमार्क ने जवाब दिया—"गुणवर्मा का व्यवहार बेतलब का कदापि नहीं है! उनके प्रति श्रद्धा-भक्ति रखने वाले दिलावर सिंह तथा जगत सिंह के बीच के झगड़े का फ़ैसला करके उनकी योग्यता के आधार पर संचालन का भार सौंपने के लिए वे राजा के पद पर थोड़े ही हैं? साथ ही वे एक साधारण मनुष्य भी नहीं हैं! साधारण मनुष्यों के भीतर की कमजोरियों से घृणा करके वे कभी उस समाज से दूर हो गये हैं! लेकिन वे गाँव की जनता की भक्ति और उनके भीतर मुक्ति पाने की कामना को देख उन्हें अपने अनुभव तथा ज्ञान का परिचय कराने के लिए आये और उनके अनुरोध पर उनके बीच अपना जीवन बिताने के लिए गुणवर्मा ने मान लिया। मगर वे अपने भक्तों के बीच मुक्ति की अपेक्षा अधिकार के प्रति ज्यादा प्रलोभन देख विरक्त हो चुपचाप कहीं चले गये। उनके चले जाने के पीछे उनकी संकोचशीलता नहीं, बल्कि अधिकार के पीछे दौड़ने वाले दिलावर सिंह तथा जगत सिंह के प्रति घृणा की भावना है। यह घृणा का भाव उनके भीतर पहले से ही रहा है। अधिकार के पीछे उनके दो भाई लड़कर मर गये थे, इसीलिए उन्होंने राज्य तक को त्याग दिया था न?"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पुनः पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

जादू का सपना

शेखर और विट्ठल गहरे दोस्त थे। बचपन में दोनों ने एक ही पाठशाला में शिक्षा पाई। पढ़ाई के समाप्त होने पर विट्ठल से बढ़कर शेखर को कहीं अच्छी नौकरी मिली। दोनों ने एक ही शहर में अपना स्थिर निवास बनाया।

विट्ठल की पत्नी श्यामला और शेखर की पत्नी विमला के बीच दोस्ती न हो पाई। क्योंकि विमला अमीर घराने की थी, इसलिए वह श्यामला का ठीक से आदर नहीं करती थी। बदक़िस्मती से एक बार आग के लगने से विट्ठल का घर जल गया। वह बड़ी मुश्किल से अपनी पत्नी और बच्चों के प्राण बचा पाया, मगर उसकी सारी संपत्ति नष्ट हो गई।

विट्ठल की इस बुरी हालत पर शेखर को बड़ा दुख हुआ। वैसे विट्ठल के शेखर जैसे कई अच्छे मित्र थे। सब मिलकर उचित धन की मदद देकर विट्ठल के घर बनाने में हाथ बंटा सकते थे।

लेकिन वक़्त पर शेखर के पास रुपये न थे। उसकी पत्नी के पास उसके पीहर से प्राप्त गहने थे। विमला गहनों पर जान देती थी। सोते वक़्त भी वह गहनों को गले में धारण करती थी।

शेखर अब आफ़त में फँस गया। वह समय पर भले ही विट्ठल को धन की मदद न दे, कम से कम गहने दे तो वह कहीं गिरवी रखकर अपनी हालत के सुधरने पर उन्हें छुड़ाकर कर्ज़ चुका सकता है। मगर ऐसा करने को विमला तो नहीं मानेगी।

सोच-विचार करने पर शेखर को एक उपाय सूझा। विमला सपनों पर अंध-विश्वास रखती है। वह कहा करती है कि जो सपने होते हैं, वे कभी न कभी

विश्वेश्वर प्रसाद

सच होकर निकलते हैं। क्योंकि इसके पहले उसने तथा शेखर ने जो सपने देखे, संयोग से वे सच निकल थे। इसलिए शेखर ने निश्चय कर लिया कि उसकी पत्नी का सपनों के प्रति जो विश्वास है, उसे विट्ठल की मदद करने के काम में लाया जाना चाहिए।

एक दिन रात के वक़्त शेखर ने घबड़ाये हुए अपनी पत्नी को नींद से जगाया। विमला ने भी घबराकर अपने गले के गहनों को टटोलकर देखते हुए पूछा–"बताइये, क्या हुआ ?"

शेखर ने कहा–"मैंने बुरा सपना देखा है, हमारे घर में चोर घुस आये हैं!"

विमला ने कांपते हुए पूछा–"बताइये, अब हमें क्या करना होगा ?"

"करने को क्या है? आखिर वह तो एक सपना है। सवेरा हो जाने पर शायद मैं भूल जाऊँगा, इसीलिए मैंने तुम्हें जगाकर अभी सुनाया!" शेखर ने कहा।

"आप यह सोचकर इसे टालिए मत, लीजिये, मुर्गे ने भी बांग दी है! सवेरे के सपने सच निकलते हैं! इसके पहले हमारे दो-चार सपने जो सच निकले, वे सवेरे ही देखे गये थे।" विमला ने अपनी बात का समर्थन किया।

"बात तो सच है, पर बताओ, अब क्या किया जाय?" शेखर ने पूछा।

"हमारे ये सारे गहने घर के अन्दर कहीं गड्ढा खोदकर उसमें छिपा दे, तो हमें चोरों का डर न होगा।" विमला ने उपाय बताया।

"क्या चोर हमारे घर में घुस आने पर वह गहने न पाकर हमें यों ही छोड़ देगा? गहनों के लिए हमें नहीं सतायेगा?" शेखर ने शंका प्रकट की।

विमला ने स्वीकार सूचक सर हिलाया। शेखर थोड़ा रुककर बोला–"तब तो एक काम करेंगे! हमारे एक धनवान मित्र है। बुरे सपनों का असर एक-दो साल से ज्यादा न होगा! इसलिए हम हमारे

सारे गहने उनके यहाँ छिपाकर रखेंगे। यह भी सिर्फ़ तुम्हारी संतुष्टि के लिए ही। वैसे सपनों पर जैसे तुम्हारा विश्वास है, वैसा मेरा नहीं है।"

विमला को यह विचार अच्छा लगा। दूसरे ही दिन शेखर विमला के हाथ से गहने लेकर विट्ठल के पास चला गया। पर विट्ठल ने उन्हें गिरवी रखकर रुपये कर्ज लेने से इनकार किया। इस पर शेखर ने ही गिरवी रखकर विट्ठल को रुपये ला दिये। अपने दोस्त की इस उदारता पर विट्ठल की आँखों से आँसू निकले।

थोड़े दिन गुजर गये। एक दिन विमला ने शेखर से कहा—"अब हम अपने गहने ले आयेंगे!"

शेखर ने बताया कि उसने जिस धनवान के यहाँ गहने रखे हैं, वह शहर में नहीं हैं, एक हफ़्ते बाद ही लौट आने वाले हैं।

इस घटना के तीन दिन बाद एक चोर अपने हाथ में छुरी लेकर अपनी आँखों पर नक़ाब डाले शेखर के घर में घुस आया, शेखर तथा उसकी पत्नी को जगा कर बोला—"मैंने सारा घर छान डाला है, मुझे एक भी क़ीमती चीज़ दिखाई नहीं दी! मेरे हाथ में छुरी देख रहे हो न? चुपचाप बताओ कि गहने तुम लोगों ने कहाँ छिपा रखा है!"

थर-थर कांपने वाली अपनी पत्नी को सांत्वना देते हुए शेखर ने चोर से कहा—

"तुम यह सोचकर हमारे घर में घुस आये होगे कि बाहर से देखने पर यह मकान बहुत बड़ा है, इसलिए बड़ी रक़म तुम्हारे हाथ लगेगी! वैसे हमारा परिवार छोटा जरूर है, मगर हम बड़ों की नक़ल करने को लालच में आकर फ़िज़ूल खर्च किया करते हैं! सच्ची बात यह है कि इस वक़्त हम कर्ज के बोझ से लदे हुए हैं!"

चोर थोड़ी देर चुप रहा, फिर खीझ कर बोला—"छी, चोर को अपने कर्ज का हिसाब देने वाले तुम भी कैसे मर्द हो? फिर भी मुझे संदेह हो रहा है कि इसमें कोई दगा है! इस बार में तुम्हारे बारे में अच्छी तरह से दरियाफ़्त करके तब आ जाऊँगा। उस वक़्त अगर मुझे पता चल जाय कि इस समय तुम जो कुछ सुना रहे हो, वह झूठ है, तब मैं तुम्हारी खबर लूंगा। समझे?" यों धमकी दे छुरी दिखाते वह कमरे से बाहर निकल गया।

चोर के चले जाने पर विमला संभल कर बोली—"देखते हो न? तुम्हारा सपना सच होकर निकला! हमारी क़िस्मत अच्छी थी, इसलिए हम पहले ही सावधान हो गये!"

कई दिन बाद जब विट्ठल की हालत सुधर गई, तब उसने शेखर के गहने छुड़ाकर उसे दे दिये।

शेखर अपनी पत्नी के गहने उसे लौटाते हुए बोला—"इतने सारे दिन बीत गये, अब चोरों का डर क्या है!"

विमला ने अपने गहनों को आँखों से लगाकर अपने गले में पहन लिये। शेखर अपनी पत्नी के इस भोलेपन पर मन ही मन हँस पड़ा। सपनों के प्रति उसका जो अंध विश्वास है, उसने एक मित्र को आफ़त के वक़्त मदद देने में सहायक सिद्ध हुआ। लेकिन उसने यह बात कभी अपनी पत्नी को नहीं बताई कि अपने सपने को सच साबित कराने के लिए उसी ने अपने एक दोस्त को चोर के रूप में घर में घुस आने की योजना बनाई थी।

उदारता

अनुरूप देश के राजा अनंतपाल जब-तब छद्मवेष में सारे देश का भ्रमण करके अपनी प्रजा के सुख-दुखों का पता लगा लेते थे। एक बार वे किसी गाँव की एक गली से गुजर रहे थे, तब उन्हें एक चबूतरे पर उदास बैठी एक औरत दिखाई दी।

राजा उस औरत की चिंता का कारण जानना चाहते थे, इतने में पड़ोसी मकान से एक औरत बाहर निकली। उसने उस औरत से पूछा—"कांताबाई, बात क्या है? उदास क्यों हो?"

यह सवाल सुनने पर कांताबाई की आँखों में आँसू छलक आये, वह बोली—"पार्वती, क्या बताऊँ? कई दिन बाद हमारी बेटी के लिए एक रिश्ता आया, वैसे उन लोगों ने हम से दहेज़ ज्यादा नहीं माँगा, लेकिन शादी के खर्च के लिए भी तो कम से कम एक हज़ार रुपये चाहिए। वे बहुत कोशिश कर रहे हैं, मगर मिलने की आशा नहीं है।"

पार्वती जानती थी कि कांताबाई की कमाई वैसे कोई ज्यादा नहीं है; और वह दंपति अपनी जवान बेटी की शादी को लेकर इधर एक साल से चिंतित हैं।

पार्वती सहानुभूति दिखाते हुए बोली—"कांताबाई, मैं भी जब-तब तुम्हारी लड़की की शादी के बारे में सोचा करती हूँ। तुम जानती हो, हमारी आमदनी वैसे कोई ज्यादा नहीं है। इसलिए मेरी इच्छा होती है कि अगर भगवान की कृपा से मुझे दो हज़ार रुपये मिल जाय तो उनमें से एक हज़ार तुम्हारी बेटी की शादी के खर्च के लिए दे दूँ और बाक़ी एक हज़ार से कुछ दिन बेफ़िक्र अपने दिन बिता दूँ।"

चंदूलाल नाहर

राजा ने उनकी बातचीत सुन ली। वे समझ गये कि वे दोनों अड़ोस-पड़ोस के गरीब परिवारों की औरतें हैं।

दूसरे दिन सूर्योदय के समय नींद से जागते ही पार्वती ने दर्वाजा खोला तो देखती क्या है, देहली के एक तरफ़ एक पोटली पड़ी हुई है। बाहर लोगों की चहल-पहल भी न थी। इसलिए वह बड़ी खुशी के साथ उस पोटली को लेकर घर के अंदर चली गई।

थोड़ी देर बाद एक राजभट ढिंढोरा पीटते उस गली से गुजरा। वह चिल्लाकर कह रहा था-"गांव की गली में कहीं दो हज़ार रुपयों की पोटली फिसलकर गिर गई है। राजा गांव के बाहर आम के बगीचे में पड़ाव डाले हुए हैं। यदि किसी के हाथ उन रुपयों की पोटली लगे तो राजा को सौंप दे। राजा उन्हें उचित इनाम देंगे।"

पार्वती रुपयों की पोटली लेकर राजा के पास पहुंची, सारी कहानी उन्हें सुनाकर वह पोटली राजा के सामने रखी। राजा पार्वती की तारीफ़ करके बोले-"ये दो हज़ार मैं तुम्हें इनाम देता हूं। ले जाओ।"

घर लौटते ही पार्वती ने कांताबाई को सारा समाचार सुनाकर कहा-"बहन, हम यह समझ लेंगी कि ये रुपये भगवान और राजा दोनों ने मिलकर हमें दिये हैं। इनमें से मैं तुम्हें एक हज़ार रुपये देती हूं। लड़की की शादी की समस्या हल हो
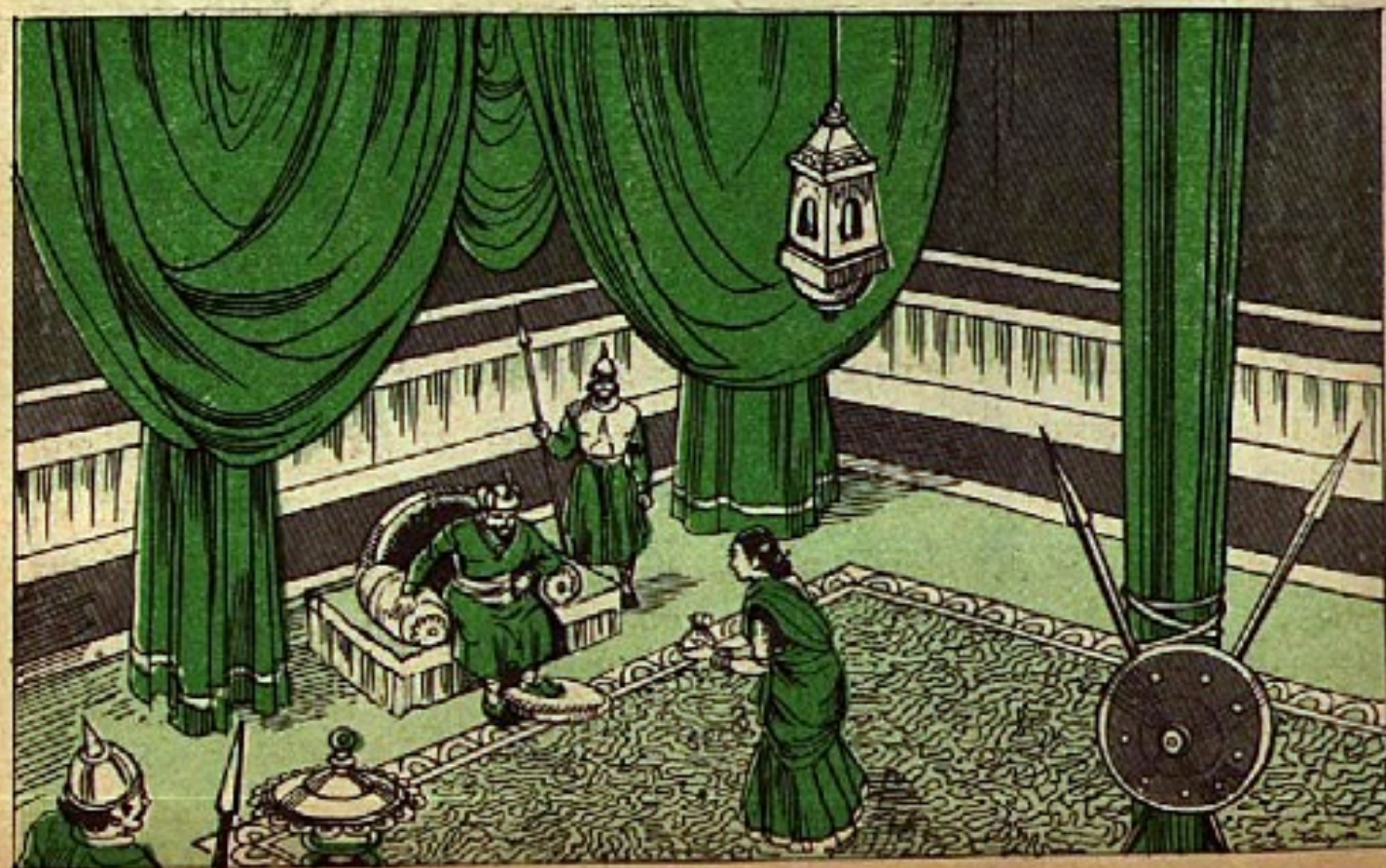
जाएगी।" यों कहकर पार्वती ने गिनकर एक हज़ार रुपये कांताबाई के हाथ में दिये।

रुपये पाकर कांताबाई उस वक़्त जरूर खुश हो गई, मगर बाद को पार्वती के प्रति उसके मन में ईर्ष्या पैदा हो गई। वह सोचने लगी कि उसकी बेटी की शादी के वास्ते जब पार्वती ने एक हज़ार रुपये देने की बात कही, इसके बाद ही उसे रुपयों की पोटली मिल गई। याने पार्वती को रुपये प्राप्त होने का कारण मेरी बेटी की क़िस्मत ही है।

इस प्रकार लोभ में पड़कर कांताबाई बेमतलब की बातें सोचने लगी। उस दिन शाम को पार्वती जब पिछवाड़े में कुएँ से पानी भर रही थी, तब कांताबाई चुपचाप उसके घर में घुस गई और रुपयों की पोटली लेकर चली गई।

थोड़ी देर बाद पार्वती ने संदूक़ खोलकर देखा, रुपयों की पोटली गायब थी। उसे बड़ा दुख हुआ। उसने कांताबाई के पास जाकर यह बात बताई।

कांताबाई बड़ी चिंता का अभिनय करते बोली—"ओह, बहन! तुम्हारे साथ कैसे अन्याय हो गया है? मेरी बेटी की शादी का खर्च में जैसे-तैसे निकाल लूँगी, तुम अपने ये हज़ार रुपये लेती जाओ।"

"ऐसा मत कहो। बेटी की शादी को टाला नहीं जा सकता। एक हज़ार रुपयों से मेरी दरिद्रता दूर होनेवाली नहीं है।" पार्वती बोली।

कांताबाई का एक चोर की भांति पार्वती के घर में घुसना, रुपयों की पोटली के साथ बाहर जाना—ये सब राजा के द्वारा पहरे पर बिठाये गये दो राजभट उस गली के छोर पर बैठकर देख रहे थे। थोड़ी देर बाद वे अपने असली वेष में कांताबाई के मकान की तलाशी लेकर दो हजार रुपये पा गये। तब राजभटों ने पार्वती और कांताबाई को राजा के सामने हाजिर किया।

राजा ने पार्वती से कहा—"मैंने तुम्हें दो हजार रुपये दिये, वे कांताबाई के घर में मेरे भटों को बरामद हुए हैं। दोस्ती का स्वांग रचते कांताबाई ने तुम्हारे साथ बड़ा विश्वासघात किया है, इसलिए मैं उसे कड़ी सजा सुनाने जा रहा हूं।"

कांताबाई कांप उठी और अपने अपराध को स्वीकार करने को हुई, इस पर पार्वती बोली—"महाराज, आप के भट भ्रम में पड़ गये हैं। मैंने पहले सोचा था कि कांताबाई की बेटी की शादी के लिए एक हजार रुपये दे दूं तो चल जाएगा। लेकिन सोचने पर मुझे लगा कि दो हजार देना उचित होगा। यही सोचकर मैंने कांताबाई को दो हजार रुपये दिये हैं।"

राजा ने भांप लिया कि पार्वती अपनी पड़ोसिन कांताबाई की गलती को छिपाने के लिए झूठ बोल रही है। राजा ने पार्वती की उदारता की मन ही मन प्रशंसा करते हुए उससे कहा—"पार्वती, तुम्हारी ईमानदारी और उदारता प्रशंसनीय है। मैं तुम्हें उन दो हजार रुपयों के साथ एक हजार रुपये और इनाम में दे रहा हूं। तुम यह सारा धन अपने ही पास रखकर कांताबाई की बेटी की शादी ठीक से चलाओ और साथ ही कांताबाई की वक्र बुद्धि को सुधारने की जिम्मेदारी भी तुम्हीं पर डाल रहा हूं।"

इसके बाद पार्वती राजा को प्रणाम करके चल पड़ी। उसके पीछे अपने अपराध के लिए पछताते हुए कांताबाई भी सर पीटते चल पड़ी।

दासी पुत्र

ब्रह्मदत्त काशी राज्य पर जब शासन कर रहे थे, उन दिनों में बोधिसत्व एक धनवान के रूप में पैदा हुए। जवान होने पर शादी कर ली। थोड़े समय बाद बोधिसत्व के एक पुत्र हुआ। उसी दिन उस घर की दासी के गर्भ से भी एक पुत्र पैदा हुआ। उसका नाम कटाहक रखा गया।

धनवान का पुत्र और दासी पुत्र कटाहक भी धीरे-धीरे बढ़ने लगे। धनवान का पुत्र जब पढ़ने के लिए जाता, तब कटाहक उसका तख्ता व किताबें लेकर साथ चलता था। इसलिए धनवान के पुत्र ने जो कुछ सीखा, वह सब दासी पुत्र ने भी सीख लिया।

धीरे-धीरे कटाहक शिक्षित और अक़्लमंद के रूप में मशहूर हुआ। इतना सब कुछ होते हुए भी एक नौकर के स्तर पर रहना कटाहक को अच्छा न लगा। उसके मन में यह इच्छा पैदा हुई कि उसकी शिक्षा और अक़्लमंदी के अनुकूल उचित स्थान प्राप्त कर लेना चाहिए। इस वास्ते उसने एक उपाय सोचा।

काशी से कई कोस दूरी पर प्रत्यंत देश में बोधिसत्व के एक लखपति मित्र रहा करता था। उसके नाम कटाहक ने खुद अपने मालिक की ओर से एक जाली पत्र लिखा:

"मैं अपने पुत्र को आप के पास भेज रहा हूँ। हमारे बीच रिश्ता जोड़ लेना उचित होगा। इसलिए आप अपनी पुत्री का विवाह मेरे पुत्र के साथ करके अपने ही घर इसे रखिये। मैं फ़ुरसत पाकर जरूर आप से मिलने की कोशिश करूँगा!"

इस तरह चिट्ठी लिखकर कटाहक ने अपने मालिक की मुहर उस पर लगा दी,

उनके खजाने से अपने लिए आवश्यक धन लेकर प्रत्यंत देश चला गया। वहाँ पर उस लखपति से मिलकर उनके हाथ यह चिट्ठी दी।

लखपति वह चिट्ठी पाकर खुशी के मारे उछल पड़ा। उसने एक शुभ मुहूर्त में कटाहक के साथ अपनी पुत्री का विवाह किया।

फिर क्या था, कटाहक की सेवा में अब अनेक नौकर-चाकर हाज़िर रहने लगे। उसे स्वादिष्ट भोजन मिलने लगा। वह सुख-भोगों में डूब गया, फिर भी वह प्रति दिन नाहक़ खीझकर कह उठता था– "छी: छी:, इस प्रत्यंत देश की जनता सभ्यता तक नहीं जानती। यह भी क्या कोई भोजन है? और देखो, ये वस्त्र कैसे हैं? मैंने ऐसी असभ्यता और उजड्डपन कहीं नहीं देखा है।"

इस बीच बोधिसत्व के मन में संदेह हुआ कि आखिर कटाहक का क्या हो गया है? उसका पता किसी को न था। इसलिए उसकी खोज करने के लिए बोधिसत्व ने चारों तरफ़ अपने सेवकों को भेजा। उनमें से एक ने प्रत्यंत देश जाकर इस बात का पता लगाया कि कटाहक ने एक लखपति की बेटी के साथ शादी करके अपना नाम तक बदल डाला है और वह अपने को काशी के अमुक धनवान का पुत्र बतला रहा है।

यह खबर मिलते ही बोधिसत्व को बड़ा दुख हुआ। वे खुद जाकर कटाहक को ले आने के ख्याल से प्रत्यंत देश के लिए रवाना हुए। उनके आगमन का समाचार सुनकर कटाहक घबरा गया। पहले उसने भाग जाना चाहा, पर ऐसा करने पर उसका नुक़सान ही होगा, कोई फ़ायदा न होगा। आखिर उसने सोचा कि अपने मालिक को सच्चा हाल बतलाना ही उचित होगा।

अपने मालिक के द्वारा स्वयं सारा हाल जानने के पहले वही सच्ची हालत उन्हें

बताकर उन्हें शांत करना और उनसे अपनी करनी के लिए क्षमा मांग लेना अच्छा होगा।

पर अपने मालिक के पास एक नौकर जैसा व्यवहार करते देख सब लोग उस पर शंका कर सकते हैं। यों विचार करके एक दिन कटाहक ने अपने नौकरों से कहा–"मैं सब लोगों के पुत्रों जैसा नहीं हूँ। मैं अपने पिता के प्रति अत्यंत पूज्य भाव रखता हूँ। जब मेरे पिता भोजन करने बैठते हैं, तब मैं उनके पास खड़े होकर पंखा झलता हूँ। पानी वगैरह सारी चीज़ें मैं उन्हें खुद पहुँचा देता हूँ।" इन शब्दों के साथ उसने अपने तथा नौकरों द्वारा किये जानेवाले कार्यों का परिचय दिया।

इसके बाद कटाहक अपने ससुर के पास जाकर बोला–"मेरे पिताजी आ रहे हैं, मैं अगवानी करके उन्हें ले आऊँगा।"

लखपति न मान लिया।

कटाहक अपने मालिक से नगर के बाहर ही मिला, उनके पैरों पर गिरकर अपनी करनी का परिचय दिया, उनसे क्षमा माँगकर प्रार्थना की कि उसे खतरे से बचावे। बोधिसत्व ने उसे अभयदान दिया। इसके बाद कटाहक बोधिसत्व के साथ अपने ससुर के घर पहुँचा।

लखपति बोधिसत्व को देख प्रसन्न हुआ और बोला–"आपकी इच्छा के अनुसार मेरी बेटी का विवाह आपके पुत्र के साथ किया है।"

बोधिसत्व ने संतुष्ट हो जाने के जैसा अभिनय किया और कटाहक के साथ ऐसा ही वार्तालाप किया जैसे अपने पुत्र के साथ करते हैं। इसके बाद उन्होंने लखपति की बेटी को बुलाकर पूछा–"बेटी, मेरा पुत्र तुम्हारे साथ अच्छा व्यवहार कर रहा है न?"

"वैसे उनके अन्दर कोई कमी नहीं है, पर खाने की चीज़ों में उनको एक भी पसंद नहीं आती। कितने भी प्रकार के

व्यंजन अच्छी तरह से बनवा दूं, फिर भी उनमें कोई न कोई दोष ढूंढ लेते हैं! मेरी समझ में नहीं आता कि किस तरह से उनको खुश किया जा सकता है।" कटाहक की पत्नी ने बताया।

"हां, वह खाने के समय इसके पहले हमारे घर पर भी इसी तरह सब को तंग किया करता था। इसलिए इस बार जब वह खाने बैठकर खाने की चीज़ों की शिकायत करने लग जाएगा, तब तुम यह श्लोक पढ़ो। मैं एक श्लोक तुम्हें लिखकर देता हूँ। उसे तुम कंठस्थ कर लो। उसे पढ़ो, फिर वह कभी खाते वक़्त शिकायत न करेगा। तुम जो भी खिलाओ, चुपचाप खा जाएगा।" इन शब्दों के साथ बोधिसत्व ने उसे एक श्लोक लिखकर दिया।

इसके बाद बोधिसत्व थोड़े दिन वहाँ बिताकर काशी को लौट गये। उनके जाने के बाद कटाहक की हिम्मत और बढ़ गई। वह पहले से कहीं ज्यादा शिकायत करने लगा। खाने की हर चीज की शिकायत शुरू की।

एक दिन कटाहक के मुंह से शिकायत सुनकर उसकी पत्नी ने यह श्लोक पढ़कर सुनाया:

"बहूंपि सो विकत्थेच्य अं इं
जनपदंगतो,
अन्वागं त्वान धूसेच्य भुंज
भोगे कटाहक।"

(कटाहक अनेक प्रकार से गालियां सुनकर दूसरी जगह जाकर अन्यों की निंदा करते समस्त प्रकार के सुख भोगता है।)

कटाहक की पत्नी इस श्लोक का भाव नहीं जानती थी। पर कटाहक ने समझ लिया कि उसके मालिक ने उसके नाम के साथ सारा रहस्य उसकी पत्नी को बता दिया है।

इसके बाद कटाहक ने फिर कभी खाना खाते वक़्त किसी चीज़ की शिकायत नहीं की, बल्कि संतुष्ठिपूर्वक खाते हुए सुखपूर्वक अपने दिन बिताने लगा।
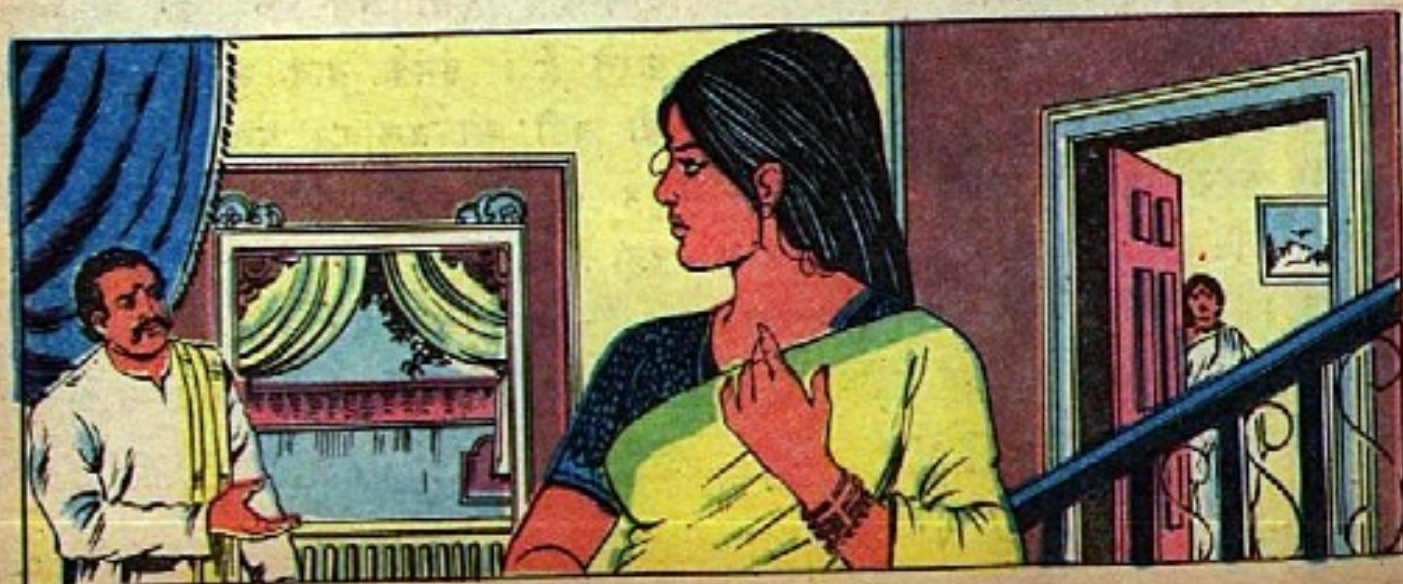
हमला—बदला

छठी सदी में पैगंबर महम्मद ने जो नया मजहब स्थापित किया, वही इस्लाम है। खाना बदोश जातियों में इस्लाम ने एकता स्थापित की। महम्मद के बाद इस धर्म के संचालकों को खलीफ़ा कहते हैं। खलीफ़ाओं ने कई देश जीते। हिन्दुस्तान को जीतने की इच्छा उनके दिल में पैदा हुई।

इस के लिए उन्हें एक अच्छा मौक़ा मिला। लंका से रवाना हो सिंधु समुद्री तटीय प्रदेशों में यात्रा करने वाली नौकाओं को समुद्री लुटेरों ने लूट लिया। वे नौकाएँ लंका के राजा से कुछ अमूल्य उपहार लेकर ईराक के खलीफ़ा के प्रतिनिधि-अल हजाज के वास्ते ले जा रही थीं।
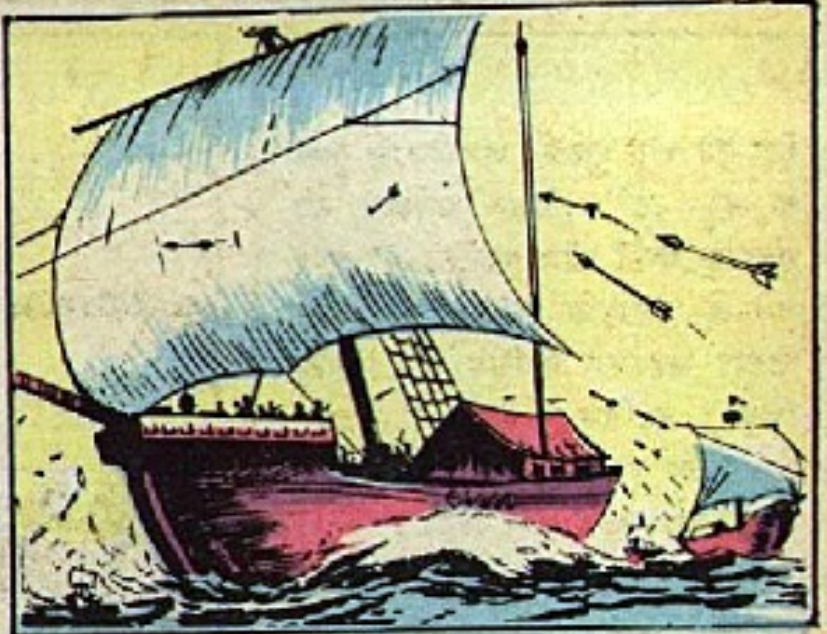
उस समय सिंधु पर राजा दाहिर राज्य करते थे। खलीफ़ा ने दाहिर से उन चीजों की क़ीमत मांगी। इस का तिरस्कार करते दाहिर ने साफ़ बता दिया कि समुद्री डाकुओं के हमले के वह जिम्मेवार नहीं है, नौकाओं को उचित सुरक्षा के साथ ले जाना उन्हीं का कर्तव्य है।

यह उत्तर पाकर अल हजाज ने सिंधु पर विजय पाने के लिए बड़ी फ़ौज भेजी। देबाल नामक स्थान पर भयंकर लड़ाई हुई। वैसे राजा दाहिर युद्ध के लिए पहले से तैयार न था, फिर भी हिम्मत के साथ लड़कर दुश्मन को हराया, उस लड़ाई में उनके कई सेनापति मर गये।

हार की बात सुनकर अल हजाज गुस्से से भर उठा। उसने खलीफ़ा की मदद से भारी फ़ौज इकट्ठी की और उस के सेनापति के रूप में अपने दामाद महम्मद कासिम को नियुक्त किया। कासिम न केवल हिम्मतवर था, बल्कि युद्ध-निपुण भी था। उसने देबाल पर हमला बोल दिया।

धन के लोभी काका कोटाल नामक सामंत को कासिम ने अपने पक्ष में कर लिया। कोटाल ने यह झूठा प्रचार शुरू किया कि ज्योतिषियों ने राजा दाहिर के हारने की बात बताई है। इसपर दाहिर के सैनिकों का उत्साह मंद पड़ गया। कुछ सेनापति दुश्मन के पक्ष में चले गये।

राजा दाहिर ने ऐसी विषम स्थिति में भी शत्रु के साथ साहस पूर्वक युद्ध किया। पर उस में वह घायल हुआ। कुछ विश्वासपात्र सैनिक दाहिर को एक गुप्त द्वार से क़िले के भीतर ले गये, लेकिन दाहिर वहाँ पर मर गया। उसकी पत्नी रानीबाई ने इसे दुख करने का समय न माना और अपने हाथ में तलवार धारण की।

रानीबाई ने क़िले के बुर्जों पर खड़े होकर अपने सैनिकों में उत्साह भर दिया। इस प्रकार थोड़ी देर के लिए वह दुश्मन को रोक सकी, लेकिन ज्यादा संख्या में रहनेवाले शत्रु सैनिक क़िले में घुसने लगे। रानीबाई ने सैनिकों में उत्साह भरते किले की दीवारों पर से दुश्मन पर तेल में भीगी चीजों और शिलाओं को भी गिरवा दिया।

फिर भी दुश्मन क़िले के भीतर के एक-एक भवन पर अधिकार करने लगे। रानीबाई ने भांप लिया कि अब उसकी हार निश्चित है, तब वह अंतःपुर की स्त्रियों के साथ एक कमरे में पहुँची और उसमें आग लगवा दी। जब क़िला दुश्मन के हाथों में चला गया, तब वे लोग उस कमरे में भस्मीभूत नारियों की लाशों को ही देख पाये।

विजयी महम्मद कासिम मृत लोगों को छोड़ दाहिर के बचे हुए नागरिकों में से तीस हज़ार लोगों को अपने गुलामों के रूप में ईराक ले गया। उन में दाहिर की दो छोटी पुत्रियाँ भी थीं। कासिम ने उन लड़कियों को खलीफ़ा को भेंट में सौंप दिया।

उन युवरानियों की खूबसूरती पर मुग्ध हो खलीफ़ा ने उनके साथ शादी करनी चाही। पर युवरानियों ने खलीफ़ा को बताया कि कासिम ने पहले ही उनके साथ शादी कर ली है। यह बात सुनकर खलीफा क्रोध से पागल हो उठा और अपने भटों को आदेश दिया कि कासिम को एक चमड़े के थैले में कसकर बांध करके अपने पास ले आवे।

भट कासिम को थैले में बंद कर खलीफ़ा के पास ले जा रहे थे, वह रास्ते में ही मर गया। यह खबर मिलते ही दाहिर की पुत्रियों ने खलीफ़ा को बताया कि कासिम ने उनके साथ शादी नहीं की है, हमारे माता-पिता तथा राज्य को नष्ट करने के कारण हमने उससे बदला ले लिया है। इस पर खलीफ़ा ने गुस्से में आकर उन्हें प्राणों के साथ जमीन में दफना दिया।

सदा चिंता

मजदूरी करके अपना पेट भरनेवाले रामदीन को हमेशा चिंतित रहते देख उसके दोस्त मातादीन ने इसका कारण पूछा ।

"क्या बताऊँ, दोस्त ! मेरे मालिक जो मजूरी देते हैं, वह दाल-रोटी के लिए काफी नहीं होती । शायद तुम जैसे लोग मेरी सिफ़ारिश करें तो मेरी मजूरी बढ़ा दी जाएगी । मेहर्बानी करके तुम मेरी यह मदद करके पुण्य लूटो । खाना कम होने से बदन में ताक़त न होने की वजह से मै जब-तब काम पर जाना भी बंद कर देता हूँ ।" रामदीन ने विनयपूर्वक जवाब दिया ।

इस पर मातादीन ने रामदीन के मालिक से बात करके उसकी मजदूरी दुगुनी करवा दी ।

कुछ दिन बाद रामदीन को फिर भी चिंतित देख मातादीन को आश्चर्य हुआ और उसने कारण पूछा ।

"मातादीन, क्या बताऊँ ? एक दिन भी काम पर जाने से बंद करने को मन नहीं मानता । एक दिन बंद किया तो काफी रक़म नुक़सान हो जाएगी । यही मेरी चिंता का कारण है ।" रामदीन ने जवाब दिया ।

मूर्खता का फल

एक छोटे से गाँव में 'मंदर नामक एक युवक था। उसके अपना कहने वाला कोई न था। पेट भरने के लिए वह कोई काम-धंधा भी सीख न पाया।

एक दिन रात को खाने के बाद गाँव के बुजुर्ग दुनियादारी की बातें करने पीपल के नीचे जमा हो गये।

बातों के सिलसिले में गरीब युवक मंदर की चर्चा चल पड़ी। सब ने यह निर्णय किया कि उसे कोई पेशा दिलाकर हो सके तो उसे एक गृहस्थ बना लेना हम सब का कर्तव्य है।

मंदर को बताया गया कि दूसरे दिन से उस गाँव के सौ परिवारों को हर परिवार के लिए एक बहंगी भर पानी के हिसाब से तालाब का पानी पहुँचाना उसका काम होगा। इसके बदले में उसे रोज एक परिवार में से खाना दिया जाएगा और सब मिलकर उसे गाँव के अंदर एक घर बनवाकर दे देंगे।

दूसरे दिन से मंदर सवेरे से लेकर शाम तक गाँववालों को बहंगी से पानी लाकर देने लगा।

कई दिन बीत गये। एक दिन रात को गाँव के बुजुर्ग पीपल के नीचे बैठकर बातचीत कर रहे थे। उस वक्त मंदर थोड़ी दूर पर बैठे उनकी बातचीत बड़ी सावधानी से सुनता रहा।

उस गाँव के बहुत ही पुराने शिवाले के बारे में बातचीत चल पड़ी। एक बूढ़े ने बताया कि उस मंदिर में एक शिला लेख है और उस पर एक अनोखी बात खुदी हुई है। वह अनोखी बात थी–"कोई भी व्यक्ति अगर शिवलिंग पर एक सौ पचास घड़ों का जल अभिषेक करेगा, वह चक्रवर्ती बन जाएगा।"

२५ वर्ष पहले की चन्दामामा की कहानी

बुजुर्गों में से एक ने तर्क किया कि उस शिला लेख की बातें बिलकुल झूठ हैं। उसने मजाक़ भी उड़ाया कि अगर कोई शिवलिंग पर सिर्फ़ एक सौ पचास घड़े जल का अभिषेक करे तो चक्रवर्ती बन सकता है तो यह काम हर कोई कर सकता है और सब कोई चक्रवर्ती बन सकते हैं।

थोड़ी देर तक इस बात को लेकर बहस होने के बाद सबने यह बात मान ली कि उस शिला लेख की बातें झूठी हैं।

यह सारा वाद-विवाद मंदर ने सुन लिया था। उस दिन रात को उसे नींद न आई। वह सोचने लगा–'वह प्राचीन शिला लेख कैसे झूठ हो सकता है?' तब उसके मन में यह विचार आया कि एक सौ पचास घड़ों के जल का शिवलिंग पर अभिषेक करने की सब्रता और शक्ति के न होने के कारण ही सबने उस शिला लेख का मजाक़ उड़ाया है।

अंत में उसने सोचा–"मेरा धंधा ही पानी ढोने का है। मैं डेढ़ सौ घड़ों का जल लाकर शिवलिंग का अभिषेक करूँगा। शिला लेख अगर सच्चा है तो मैं चक्रवर्ती बन जाऊँगा, वरना इस मेहनत का थोड़ा-बहुत पुण्य तो मिलेगा।"

दूसरे दिन सारे परिवारों में पानी पहुँचाने के बाद मंदर ने शिवलिंग का अभिषेक करना शुरू किया। एक-दो-तीन इस प्रकार गिनती करते शिवलिंग पर जल गिराने लगा।

एक सौ चालीस घड़ों का जल अभिषेक करते ही उस की आँखें चकराने लगीं। थकावट के मारे उसके पैर लड़खड़ाने लगे। फिर भी उसने दृढ़ निर्णय कर लिया–अब तो सिर्फ दस घड़े ही रह गये। थोड़ी सब्रता कर ले तो काम बन जाएगा।

लेकिन इस के बाद आठ घड़ों का जल लाते ही उसकी थकावट बढ़ गई। हाँफते हुए उसने एक बार शिवलिंग की ओर देखा, तब अपनी ओर नज़र दौड़ाई।

वह सोचने लगा—"एक सौ अड़तालीस घड़ों के जल का अभिषेक करने पर भी मेरे भीतर चक्रवर्ती के लक्षण बिलकुल नज़र नहीं आ रहे हैं। दुनियादारी की बातें जाननेवाले बुजुर्गों के कहे मुताबिक़ शिलालेख झूठ हो सकता है। मैं तो बावरा हूँ इसीलिए मूर्खतावश नाहक़ यह मेहनत उठाई है। जो कुछ हुआ, सो हो गया। इस बार बहंगी भर लाकर बाक़ी दो घड़ों का जल शिवलिंग पर फेंक दूंगा। मुझे नाहक़ कष्ट पहुँचानेवाला यह शिवलिंग टूट जाये। चाहे इसके बाद गाँव के लोग मुझे गालियाँ दें या पीटें।" यों सोचते मंदर गुस्से में आया और जल्दी जाकर पानी भरकर बहंगी के साथ लौट आया।

पहले ही उसने जो सोचा था, उसी निर्णय के अनुसार गुस्से से दो घड़े पानी भर लाया और सारी ताक़त लगाकर शिवलिंग पर पानी दे मारा।

दूसरे ही क्षण शिवलिंग दो टुकड़ों में फट गया और उनके बीच में से त्रिशूलधारी शिवजी प्रत्यक्ष हुए। मंदर डर के मारे कांपने लगा। इस पर शिवजी ने क्रोध में आकर डांटा—

"अरे मंदर, तुम मूर्ख हो! मंद बुद्धि हो! बुद्धिमानों का लक्षण है कि जो काम वे करना चाहते हैं, वह श्रद्धा और भक्ति के साथ करके फल की प्रतीक्षा करे! तुम अपनी मूर्खता की वजह से फल से वंचित हो गये हो! तुम बाक़ी दो घड़े जल का अभिषेक भी भक्तिपूर्वक करते तो सचमुच तुम चक्रवर्ती पद को पा जाते! बस, अब तुम यहाँ से चुपचाप बाहर चले जाओ।"

इसके बाद मंदर सर झुकाकर मंदिर से बाहर निकलने के लिए मुड़ा ही था, इतने में शिवलिंग और शिवजी भी वहाँ से गायब हो गये।

मंदर ने यह बात गाँव के बुजुर्गों को बताई। वे लोग अचरज में आये, सब मंदिर की ओर दौड़े, पर सचमुच ही मंदिर में शिवलिंग और शिलालेख दोनों गायब थे।

बड़ी रेखा – छोटी रेखा

सोमशर्मा एक साधारण गृहस्थ था। उसके दो बेटे थे। जब वे छोटे थे, तब सोमशर्मा तख़्ते पर एक रेखा खींचकर बच्चों से पूछा करते थे कि उसे मिटाये बिना छोटी रेखा बना दे। इस पर छोटा लड़का उस रेखा के पास बड़ी रेखा खींचकर पहली रेखा को छोटी दिखा देता था।

कालांतर में दोनों बेटे बड़े हो गये। शादियाँ करके अपने अपने घर अलग बसाये। सोमशर्मा अपनी पत्नी के साथ बड़े बेटे के घर में रहने लगे। लेकिन सास-बहू के बीच झगड़ा देखकर परेशान हो छोटे के घर पहुँचा।

मगर वहाँ पर भी सोमशर्मा को शांति नहीं मिली। छोटी बहू सास-ससुर के प्रति लापरवाही दिखाने लगी। आख़िर बेटे और बहू ने एक होकर उन्हें अपने घर से निकाल दिया।

इस पर सोमशर्मा और उसकी पत्नी फिर बड़े बेटे के घर पहुँचकर वहीं रहने लगे। अब उन्हें लगा कि बड़े बेटे के घर पर उन्हें काफ़ी सुख मिल रहा है।

इसके बाद सोमशर्मा अकसर गाँववालों से कहने लगा–"मेरे बड़े बेटे और बहू हमारे साथ ऐसा व्यवहार करते हैं कि हमें किसी बात की कमी महसूस नहीं होती। हमें आराम ही आराम है।"

ये बातें सुनकर बड़ा बेटा मन ही मन दुखी होते सोचने लगता–"बाबूजी, यह कोई ऐसी बात नहीं है। उस रेखा के सामने यह रेखा छोटी हो गई है! बस यही बात है!"

धूर्त पिशाच

जगन्नाथ जल्दी मचाते हुए अपनी पत्नी कामाक्षी से बोला–"जल्दी तैयार हो जाओ! गाड़ी वाला चिल्ला रहा है कि देरी हो रही है!"

दर असल कामाक्षी को यह यात्रा बिलकुल पसंद न थी। इस पर जगन्नाथ जिद्द करते बोला–"तुम एक बेवकूफ़ हो! हमें आज शहर जाना ही होगा!"

दूसरे दिन शाम को जगन्नाथ के एक दोस्त की बहन की शादी थी। गाँव में रहने पर उसे कोई न कोई भेंट या उपहार देना पड़ेगा। यह खर्च तो फ़िजूल का है। यों विचार करके जगन्नाथ ने उस दिन शाम को अपने दोस्त को बताया कि उसके ससुर की तबीयत खराब है, इसलिए वह अपने ससुराल जा रहा है।

अनिच्छापूर्वक यात्रा के लिए तैयार होने वाली अपनी पत्नी को खुश करने के ख्याल से जगन्नाथ ने कहा–"परसों तक हमारी शादी के हुए ठीक एक साल पूरा होगा। शहर में नये कपड़े खरीदकर लौट आयेंगे। इस बीच यहाँ पर शादी खतम हो जाएगी!"

कामाक्षी को यह बात जंची नहीं। उस दोस्त ने इनकी शादी के वक़्त चांदी की एक थाली भेंट की थी। कामाक्षी ने अपने पति को इस बात की याद दिलाई।

"हाँ, यह सही है कि उसने हमारी शादी के वक़्त उपहार दिया है, लेकिन मेरी बहन की शादी में थोड़े ही उपहार दिया है?" जगन्नाथ ये शब्द कहते खीझ उठा।

"तुम्हारे दोस्त को हमारी इस यात्रा का रहस्य मालूम हो जाने पर क्या वह तुमसे घृणा करेगा?" कामाक्षी ने कहा।

"वह तो निरे बेवकूफ़ है!" यों कहते जगन्नाथ अपनी अक़्लमंदी पर हँस पड़ा।

रमाकांत वर्मा

इसके बाद संध्या के समय वे दोनों किराये की गाड़ी में चल पड़े। उनका विश्वास था कि सवेरा होने के पहले वे शहर में पहुँच सकते हैं। लेकिन गाड़ी आधी दूर हो गई थी कि जोर से पानी बरसने लगा। वर्षा की बौछार से पति-पत्नी भीग गये। इतने में गाड़ी का एक पहिया रास्ते के बाज़ू के एक गड्ढे में धंस गया जिससे बैल का पैर फिसल गया और वह भी गिर गया।

गाड़ीवाला बड़ी मुश्किल से बैल को खड़ा कर पाया। मगर एक पैर से वह लंगड़ाते हुए भागने की खींचा-तानी करने लगा, इस पर गाड़ीवाले ने खीझकर जगन्नाथ से कहा—"साहब, अब यह गाड़ी चल नहीं सकती। सामने दीखने वाले पेड़ों के पीछे एक गाँव है। आप आधा किराया देकर चले जाइयें।"

लाचार होकर जगन्नाथ गाड़ी वाले के कहे मुताबिक़ अपनी पत्नी को लेकर उन पेड़ों की ओर चल पड़ा। थोड़ी दूर जाने पर बिजली की चमक में कुछ मकान दिखाई दिये। लेकिन तब तक आधी रात हो चुकी थी, इस वजह से कहीं भी चिरागों की रोशनी न थी।

जगन्नाथ रास्ते के किनारे के एक उजड़े मकान के चबूतरे पर बैठते हुए

अपनी पत्नी से बोला—"आज की रात हम यहीं पर बितायेंगे!"

कामाक्षी ने कई कहानियों में सुन रखा था कि उजड़े हुए मकानों में पिशाच बसते हैं। इसलिए वह रात वहाँ पर बिताने की बात सुनते ही उसके बदन में कंपकंपी होने लगी।

वह धीमी आवाज़ में बोली—"मैंने कई लोगों के मुँह से सुना है कि पिशाच ऐसे मकानों को ज्यादा पसंद करते हैं!"

यह बात सुनते ही जगन्नाथ के शरीर में पसीना पसीना होने लगा। मगर वह अपनी पत्नी की नजर में गिरना नहीं चाहता था, प्रकट रूप में हिम्मत करके

सूख गई। मगर यह सोच कर उसने हिम्मत बटोर ली कि पिशाच उसकी चीख सुनकर डरते हैं, इस पर वह क्रोध का अभिनय करते बोला–"उफ़! मेरे सामने आने की तुम लोगों की कैसी हिम्मत हुई?"

"महाशय, हम पर नाराज़ मत होइयेगा! हमें मारण होम का शिकार न बनाइयेगा! हमें अपने रास्ते भागने दीजिएगा।" एक पिशाच ने मिन्नत की।

"हमें प्राणों के साथ भागने दीजिए; हम ज़िंदगी भर आप के ऋणी बने रहेंगे।" दूसरे पिशाच ने कहा।

इस पर जगन्नाथ न सोचा कि ये पिशाच निरे भोले और बेवकूफ़ हैं! वह चिल्लाकर बोला–"मेरी आँखों में जो पिशाच पड़ जाते हैं, उन्हें मैं जान से कैसे छोड़ दूं? लेकिन मैं लाचार हूँ। अपनी पुरानी आदत को कैसे बदल सकता हूँ?"

"आज रात के वक़्त हमारे वास्ते उस पुरानी आदत को भूल जाइयेगा! इसके बदले में हमने जो कुछ सोना बचाकर रखा है, वह सब आप को दे जायेंगे।" पिशाचों ने प्रार्थना की।

जगन्नाथ मन ही मन खुश होते हुए प्रकट रूप में कठोर स्वर में बोला–"बताओ, वह सोना तुम लोगों ने कहाँ पर छिपा रखा है? मुझे सोने की फ़िक्र नहीं,

बोला–"पिशाचों से डरता कौन है? मैंने सोलह पिशाचों का मारण होम किया है! बतीस भूतों को जमीन में गाड़ दिया है। मुझे देखते ही पिशाच...." अपने ये शब्द पूरा किये बिना जगन्नाथ चीख उठा।

"चीखकर बताने की ज़रूरत क्या है कि तुम्हें देखते ही पिशाच चिल्ला उठते हैं? यूँ ही कह देना काफी नहीं है? तुम्हारी चीख सुनने पर हमारे कलेजे कांप उठे। तुम्हारी बातें सुन कर हम लोग चीखना ही चाहते थे लेकिन हमारे मूँह से बोली फूटी नहीं!" पिशाचों ने कहा।

पिशाचों को देखते ही कामाक्षी का बदन कांप उठा। जगन्नाथ की जीभ तो

मगर तुम लोगों को देखने पर मुझे दया आती है।"

"ओह, आप तो दयालू प्रभु हैं; हमारे साथ चलिये।" यों कहते पिशाच चल पड़े।

इस पर जगन्नाथ भी उनके पीछे हो लिया। कामक्षी डरते बोली—"तुम तो पागल नहीं हुए हो? मुझे यहाँ पर छोड़कर पिशःचों के पीछे भागते हो?"

"पगली! तुम थोड़ी देर यहीं पर बैठ जाओ। ये तो मूर्ख पिशाच मालूम होते हैं! मैं कुछ ही मिनटों में सोना उठा लाता हूँ। तुम्हारी क़िस्मत में सोने की करधनी लिखी गई है। इसे कौन मिटा सकता है?" यों कहते जगन्नाथ पिशाचों के पीछे चल पड़ा।

पिशाच जगन्नाथ को उस जगह ले गये, जहाँ पर छोटे से दूब व कंटीली झाड़ियाँ उगी थीं, तब बोले—"यहाँ पर खोदकर तुम उतना सारा सोना उठा ले जाओ, जितना तुम ढो सकते हो। तुमने हमको प्राणों से छोड़ दिया। इसलिए तुम्हें लाखों बार हम प्रणाम करते हैं?" ये शब्द कहकर पिशाच गायब हो गये।

जगन्नाथ एक सूखी लकड़ी हाथ में लेकर पानी में भीगी उस जमीन को खोदने लगा। गज भर की गहराई तक खोदने पर उसे चमकने वाला एक सोने का सिक्का दिखाई पड़ा। उसे अलग रखकर वह उँगलियों से जमीन खुरेदने लगा, तब उसके हाथ कई सोने के सिक्के लगे।

थोडी ही देर में जगन्नाथ के बाजू में सोने के सिक्कों का ढेर लग गया। फिर भी लोभ में आकर जगन्नाथ जमीन को कुरेदता ही रहा।

अचानक यह सवाल सुनकर वह चौंक पड़ा। कोई उस से पूछ रहा था–"कौन है वह? यहाँ पर क्या खोद रहा है?"

तब तक सवेरा होने जा रहा था। यह सवाल करने वाले गाँव के पहरेदार थे।

जगन्नाथ ने झट से अपना अंगोछा निकालकर सोने के सिक्कों के ढेर पर ओढ़ा दिया। पहरेदारों में से एक अंगोछे को हटाकर चीख उठा। उस ढेर को देखने पर जगन्नाथ की आँखें चकरा गईं। रात भर वह जिन्हें सोने के सिक्के समझकर भ्रम में पड़ा हुआ था, वे हड्डियों के टुकड़े थे। दर असल जगन्नाथ एक श्मशान में बैठा था। उसने जहाँ पर खोदा था, वह पुराने जमाने की एक समाधि थी।

इसके बाद गाँव के पहरेदारों ने जगन्नाथ की बाँहें कसकर गाँव के मुखिये के सामने हाज़िर किया। इस सारे दृश्य को दूर से देखने वाली कामाक्षी ने आँखों में आँसू भरकर सारा वृत्तांत मुखिये को सुनाया।

मुखिये का कामाक्षी की बातों पर विश्वास जम गया। वह जगन्नाथ को डांटकर बोला–"तुम अपने को बड़ा बुद्धिमान समझकर अपने दोस्त तथा पिशाचों को भी धोखा देने चले और तुम खुद मुसीबत में फँस गये! जैसे तुमने सोचा कि वे पिशाच बेवकूफ़ हैं, दर असल वे धूर्त हैं। इस अनुभव के आधार पर ही सही, तुम अपनी अक्लमंदी जताना छोड़कर दूसरों के साथ ईमानदारी का व्यवाहार करना सीख लो।"

इस पर जगन्नाथ ने मुखिये से माफ़ी मांगी और उनकी मदद से उसी वक़्त किराये की गाड़ी ठीक करके अपने दोस्त की बहन की शादी में शामिल होने के लिए चल पड़ा।

रसोइये का इलाज़

किसी जमाने में रामनाथ नामक एक धनवान था। उस का रसोइया मंगलसिंह रसोई बनाने में बेजोड़ था। उसकी रसोई बड़ी स्वादिष्ट होती थी।

एक दिन मंगलसिंह ने अपने मालिक को बताया कि उस का लड़का शहर में नौकरी करता है और वह भी शहर में नौकरी पाकर वहीं पर चला जा रहा है।

इसके बाद पूर्णानंद नामक एक आदमी रामनाथ के घर पहुँचा, बोला–"मालिक, मुझे मालूम हुआ है कि आप के लिए एक रसोइये की जरूरत है, मैं रसोई बनाने के साथ इलाज करना भी जानता हूँ।"

रामनाथ यह सोचकर मन ही मन खुश होते हुये कि इलाज करने वाले रसोइया का मिलना तो क़िस्मत की बात है, पूर्णानंद से बोला–"अच्छी बात है! तुम कल से ही काम पर लग जाओ।"

पूर्णानंद दूसरे दिन काम पर लग गया। उसकी रसोई रामनाथ को बड़ी स्वादिष्ट मालूम हुई। लेकिन दो-चार दिनों में ही वह बदहजमी का शिकार हो गया। इस पर रामनाथ ने रसोइये को बुलाकर अपना हाल बताया।

पूर्णानंद ने दवाइयों की तीन पुडिया अपने मालिक के हाथ देकर समझाया– "मालिक, आप खाने के बाद एक-एक पुडिया का सेवन करें।" फिर थोड़ी देर रुककर बोला–"मालिक, मैं आपके यहाँ एक रसोइये के रूप में ही नौकरी पर लग गया हूँ, इसलिए वैद्य के रूप में मुझे थोड़ा-बहुत पारिश्रमिक देना न्याय संगत है न?"

रामनाथ मुस्कुरा उठा और एक एक पुडिया के लिए एक-एक रुपये के हिसाब से तीन रुपये पूर्णानंद के हाथ दिये। तीनों पुडियों की दवा खाने पर रामनाथ की

प्रमीला कपूर

बदहजमी एक दम गायब हो गई। इस घटना के एक हफ़्ते बाद रामनाथ को जोर के सिर दर्द के साथ उस की आँखों भी चकराने लगीं। पूर्णानंद अपने मालिक को दवाइयों की तीन पुड़िया देकर तीन रुपये लेकर चलता बना।

दवा का अच्छा असर हुआ। रामनाथ ने पूर्णानंद से पूछा—"तुम रसोइया का काम करते ऐसे सफल वैद्य कैसे बने?"

इसके बाद पूर्णानंद के द्वारा बनाये गये स्वादिष्ट व्यंजन खाते रामनाथ हफ़्ते में एक बार बीमार हो जाता और पूर्णानंद रुपये लेकर उनका इलाज करने लगा।

एक दिन रामनाथ के मन में रसोइये के प्रति संदेह पैदा हुआ। जब तक मंगलसिंह उसके यहाँ रसोइया था, तब तक वह कभी बीमार न पड़ा था। पर पूर्णानंद के आने के बाद उसे बराबर बदहजमी और सर दर्द होने लगे हैं।

इस विचार के आते ही रामनाथ ने दूसरे ही दिन पूर्णानंद को काम से हटा दिया। यह खबर मालूम होते ही तीन रसोइये उसके यहाँ नौकरी की खोज में आये।

रामनाथ ने उन तीनों से पूछा—"तुम लोग रसोई बनाने के साथ-साथ क्या इलाज करना भी जानते हो?"

उन में से दो आदमियों ने बताया कि वे थोड़ा-बहुत इलाज करना भी जानते हैं, पर तीसरे ने कहा कि वह इलाज करना बिलकुल नहीं जानता।

रामनाथ ने तीसरे को ही अपना रसोइया बनाया। उस की रसोई भी रामनाथ को पसंद आई, लेकिन खास बात यह है कि इस रसोइये के आने के बाद रामनाथ कभी बीमार न पड़ा।

इस पर रामनाथ ने अपने मन में सोचा—"पूर्णानंद ने रसोई बनाने की कला को अपने व्यापार के रूप में तथा इलाज को अपना पेशा बना लिया है। यह संदेह मेरे मन में पहले ही पैदा होता तो मैं इन शारीरिक पीड़ाओं से कभी का बच जाता।"

विघ्नेश्वर

विनायक चौथ के दिन संध्या के समय विघ्नेश्वर अपने दांत जैसे सफ़ेद लगने वाले चन्द्रमा को देखते धीरे-धीरे क़दम बढ़ा रहे थे। उस वक़्त वे भर पेट खा चुके थे। उनके साथ चूहा भी चल रहा था।

कहा जाता है कि दूज का चांद विघ्नेश्वर का चिह्न है। विघ्नेश्वर के माथे पर सफ़ेद चन्दन की बालचन्द्र जैसी टीका, आसमान पर चौथ के चन्द्रमा के प्रतिबिंब जैसे शोभायमान थी। विघ्नेश्वर के अन्य नाम दुग्धचन्द्र और भालचन्द्र भी हैं।

चलते वक़्त विघ्नेश्वर के अंगूठे से एक पत्थर टकरा गया जिस से वे औंधे मुंह गिर गये। इसपर उन का पेट फट गया और पेट में स्थित सारे खाद्य पदार्थ छितर गये। इसे देख आसमान में चमकने वाले चन्द्रमा खिल-खिला कर हंस पड़े। देवताओं ने वहाँ पर आकर एक विशाल सर्प के चमड़े से विनायाक के पेट के चमड़े को सी दिया।

पार्वतीजी को चन्द्रमा पर बड़ा क्रोध आया। उन्होंने तुरंत चन्द्रमा को शाप दिया कि विनायक चौथ के दिन जो भी चन्द्रमा को देखेगा, वह निंदा का पात्र बनेगा।"

उस दिन से लोग विनायक चौथ के दिन बच्चों को भी चन्द्रमा को देखने से बचाते आने लगे।

द्वापर युग का प्रवेश हुआ। श्रीकृष्ण देवकी-वसुदेव के गर्भ में पैदा हो कर गोकुल में यशोदा के घर पलने लगे। बालकृष्ण ने पूतना, शकटासुर और तृणावर्त नामक राक्षसों का संहार किया।

वह विनायक चौथ का दिन था। यशोदा दूध दुह रही थी। बालकृष्ण ने यशोदा की पीठ पर से झुककर बर्तन में भरे दूध में प्रतिबिंबित होने वाले चन्द्रमा को देखा और तालियां बजाते हुए बोला- "ओह चन्दामामा! दूध के अन्दर चन्दामामा है।" यशोदा चौंककर बोली– "मेरे कान्ह, तुमने कैसा काम कर डाला? तुम अनावश्यक निंदा के शिकार हो जाओगे।"

"निंदा के माने क्या है, मां?" कृष्ण ने पूछा। "तुम्हें लोग यूं ही चोर बतायेंगे।" यशोदा ने जवाब दिया।

"मां, तुम चिंता न करो। मैं दूध-मक्खन की चोरी किया करूंगा, तब वह निंदा का कारण न बनेगा न, मां?" कृष्ण ने पूछा।

"अरे दुष्ट! तुम्हारे मुंह में ब्रह्माण्ड टूट पड़े।" यों कहते यशोदा ने अपने गालों में चुटकी ली।

"मां, क्या तुमने ब्रह्माण्ड देखा है?" कृष्ण ने पूछा।

"ब्रह्माण्डों की बात छोड़ दो, मगर तुम्हारे बड़े होने के बाद भी तुम पर नाहक़ दोषारोपण किया जाएगा!" यों कहते यशोदा ने प्यार से कृष्ण के कोमल गाल पर चुटकी दी।

"तब तो उस वक़्त मुझे फिर से चन्दामामा को देखना है न, मां?" कृष्ण ने फिर पूछा।

"बड़े हो जाने के बाद चन्दामामा को देखना और भी बड़ा अपराध है।" यशोदा बोली। फिर अपने मन में गुनगुनाने लगी–"हे विघ्नेश्वर! भोले बालक ने चन्दामामा की छाया देखी है। बस, यही बात है। इस को क्षमा कर दो।"

दूसरे दिन बलराम दौड़ते हुए आ पहुंचा और बोला–"माँ, छोटा भैया कृष्ण मिट्टी खा रहा है। मैं झूठ नहीं बोलता हूं। जाकर उसका मुंह तो देखो।" इस पर यशोदा दौड़ते हुए कृष्ण के पास पहुंची।

कृष्ण उस वक़्त मिट्टी के ढेलों को जमा कर रहा था। यशोदा ने कृष्ण के कान पकड़कर पूछा–"कान्ह! मुंह खोलो तो?"

"माँ, मुझे पिटवाने के लिए शायद किसी ने तुमसे चुगली खाई होगी। कल ही तो तुमने कहा था कि मुझ पर नाहक़ दोषारोपण होगा। मैं मिट्टी से मोदक और लड्डू बना रहा हूँ, माँ। मिट्टी से निर्मित विनायक मिट्टी से बनाई गई चीजें जरूर खायेंगे, माँ!" कृष्ण ने समझाया।

यशोदा ने अपने गालों पर खुद चपत लगाकर कहा–"बेटा, ऐसा मत बोलो! यह तो बड़ी भारी भूल है। मिट्टी से बनाये, या पत्थर से, आखिर देवता देवता ही तो होते हैं। भगवान, गलती हो गई! विघ्नेश्वर! इस बच्चे की बातों पर ध्यान मत दो!" यों कहते यशोदा ने विघ्नेश्वर का ध्यान किया।

"तब तो माँ, अगले विनायक चौथ के दिन तुम बहुत से घी के मोदक और लड्डू बनाओ। मैं देखूंगा कि आखिर वे कितने खाते हैं! अगर नहीं खाये तो मैं खिलाऊँगा?" कृष्ण ने कहा।

"तुम पहले अपना मुंह तो खोलो।" यों कहते यशोदा झुककर कृष्ण के मुंह की ओर देखने लगी। तभी कृष्ण ने "आँ..." कहते अपना मुंह खोल दिया।

कृष्ण के मुंह के भीतर देखते ही यशोदा पसीना पसीना हो गई और वह लुढ़क पड़ी। क्योंकि उसे कृष्ण के मुंह में ब्रह्माण्ड, नक्षत्र-मण्डल, सूर्य, चन्द्र, समुद्र, पर्वत–समस्त दिखाई दिये। साथ ही दूध दुहनेवाली यशोदा की पीठ पर झुककर उसके कंठ में अपने नन्हें हाथ लपेटकर दूध में चन्दामामा को दिखानेवाला कृष्ण

दिखाई दिया। यशोदा ने उसे सपना समझकर अपनी आँखें मल लीं। यह सोचकर उसने अपने चारों तरफ़ देखा कि किसी देवता या विनायक ने उसे माया में डाल दिया हो। यशोदा की चकित दृष्टि को देख उसके चारों तरफ़ कई बच्चे जमा हो गये, वे किलकारे मारने लगे, कोलाहल मचाते तालियाँ बजाने लगे। खंभे की आड़ में खड़े होकर बलराम मुस्कुरा रहा था।

कृष्ण यशोदा के मुँह पर झुककर बोला–"देखो माँ, तुम्हें मिट्टी दिखाई दी? ठीक से देखो, माँ।" यशोदा को उसके मुँह में सारे देवता दिखाई दिये। कृष्ण मुरली बजा रहा था तो विनायक तांडव नृत्य करते दीख पड़े। कृष्ण बड़े काले नाग पर लात मार रहा था। नाग कृष्ण को अपनी लपेट में ले रहा था। उस दृश्य को देख यशोदा बेहोश हो गई। जब उसने अपनी आँखें खोलकर देखा, तब उसकी खाट के चारों ओर उसे गोपिकाएँ दिखाई दीं, तब उसने सबसे पूछा–"मुझे क्या हो गया है?"

उसे किसी बात की याद न थी। वह सारी बातें इस तरह भूल गई, मानो कुछ हुआ ही न हो। इस पर गोपिकाओं ने कहा–"हम नहीं जानतीं कि तुम्हें क्या हो गया है? हमारे घरों में चोरी हो गई है। वह चोर और कोई नहीं है, तुम्हारा लाड़ला बेटा है। मक्खन, मलाई, दूध, दही–ये सब तुम्हारे बेटे के द्वारा बंदरों के झुंड और ग्वाल-बालों को बांटते हमने अपनी आँखों से देखा है।"

यशोदा खीझकर बोली–"क्या बोलीं? क्या तुम लोग समझती हो कि ये सारी चीज़ें हमारे घर में नहीं हैं? गोकुल के सारे घर मिलाकर हमारे आधे घर के बराबर नहीं हैं। तुम लोग यहाँ से चली जाओ!" यों कहकर सारी गोपिकाओं को उसने वहाँ से भगा दिया।

उस वक़्त कृष्ण धीरे-धीरे अपने क़दम बढ़ाते वहाँ पर आया और पूछा–"माँ, क्या हुआ है?"

"मैंनें जो कहा था, वही हुआ। तुम पर ये सब दोषारोपण कर रहे है।" यशोदा ने कहा।

"माँ, मैं दोषारोपण से बच गया! उन लोगों ने जो कुछ कहा, सही है।" कृष्ण न जवाब दिया।

इस पर यशोदा को बहुत गुस्सा आया। उसने एक बड़ा रस्सा लेकर कृष्ण को एक बड़ी ओखली से बांध दिया।

कृष्ण उस ओखली को खींचते ले गया और दो जुड़वें साल वृक्षों के बीच घुसकर ओखली को खींच ले गया। वे दोनों विशाल पेड़ जड़ सहित उखड़ गये। इस पर शाप से मुक्त हुए दो गंधर्व पेड़ों से निकले और कृष्ण की स्तुति करके आकाश में उड़कर अदृश्य हो गये।

एक साल बीत गया। विनायक चौथ आ पहुँची। नंद ने रंग-बिरंगोंवाली विनायक की बड़ी मूर्ति बनवाई। यशोदा ने मलाई के साथ आटा गूँथकर मोदक, घी के लड्डू वगैरह बनाये।

नैवेद्य की सारी सामग्री थालों में भर कर यशोदा ने पूजा के गृह में सजाई और किवाड बंद कर बाहर चली आई।

कृष्ण धीरे से पूजा के कमरे में पहुँचा, किवाड़ बंद करके सारे पदार्थ विनायक की मूर्ति के पास ले जाकर गिड़गिड़ाने लगा—"खाओ भाई, सारे पदार्थ खा डालो।" विघ्नेश्वर की मूर्ति सूँड से उन पदार्थों को लेकर बोली—"हे कृष्ण, मैं आप के हाथ में जो पदार्थ थमा दूँ, उन्हें आप को भी खाना पड़ेगा। विघ्नेश्वर के इतिहास में यह तो सुंदर कांड है।" इन शब्दों के साथ विनायक ने कृष्ण के मुँह में बहुत सारे पदार्थ एक साथ ठूंस डाले। इस पर थाल के थाल खाली होने लगे।

यशोदा ने पूजा मंदिर की ओर बढ़ते गवाक्ष में से अन्दर में होने वाले सुंदरकांड को देख लिया। वह एक दम चकित रह गई। उसके बदन से पसीना छूटने लगा। फिर अपने को संभालकर मन ही मन

सोचने लगी–"उफ़! मैं तो भ्रम में पड़ गई हूँ। लगता है, कि मेरी आँखों के सामने कोई माया छा गई है।" यों अपने को समझाकर यशोदा किवाड़ खोल कर भीतर पहुँची।

पर विनायक की मूर्ति जैसी की तैसी रह गई, लेकिन पूजा के सारे पदार्थ गायब थे। कृष्ण भौंचक्के हो देख रहा था।

"अरे पेटू, तुमने विनायक की पूजा करने के पहले सारे पदार्थ खा डाले।" यों कहते यशोदा ने कृष्ण की पीठ पर धीरे से थप्पड़ लगाये। इस पर कृष्ण रोते हुए भागकर कालिंदी तड़ाग के पास पहुँचा। उसके पीछे यशोदा के साथ गोकुल के सारे निवासी भी बड़ी आतुरता के साथ चल पड़े।

कालिंदी तड़ाग के कालीय महा नाग के द्वारा गोकुलवासियों की बड़ी हानि होती आ रही थी। कृष्ण कालिंदी तालाब के बीच तक जल पर फैली डाल पर से तालाब में कूद पड़ा। वह नाग पर बिजली की तरह गिर पड़ा। अपने पैरों के घुंघुरों की ध्वनि करते वह नाग के सिरों पर तांडव नृत्य करने लगा। इस तरह अद्भुत ढंग से कालीय मर्दन हुआ। इस कारण कालीय भी अपने शाप से मुक्त हो गया। उसने अपनी पुत्रियों को ले जाकर पाताल में वासुकी के हाथ सौंप दिया। इस के बाद अपने कालीय रूप को बदलकर विघ्न अब विघ्नेश्वर के अधीन में आ गया।

अपने पुत्र को उठाकर यशोदा घर लौटी तो देखती क्या है? पूजा मंदिर के थालों में वे सारे पदार्थ ज्यों के त्यों हैं। मगर बालक कृष्ण की पीठ पर यशोदा की उंगलियों के निशान साफ़ दिखाई दिये। उन्हें देख यशोदा अपने को कोसने लगी–"मेरे हाथ टूट जाये! मेरी आँखों में माया का कोई रोग समा गया है, इसीलिए मैंने अकारण मेरे प्यारे बालकृष्ण को पीटा। मैं पापिन हूँ।" यों अपने को कोसते यशोदा फफक-फफक कर रो पड़ी।

SANKAR

"माँ, देरी होती जा रही है। तुम पूजा करो न?" बालकृष्ण ने कहा। इस पर यशोदा और नंद ने कृष्ण के हाथों से पूजा कराई। तब नैवेद्य को सारे गाँव में बांट दिया गोकुलवासी आपस में यह कहते फूले न समाये कि उन पदार्थों में एक दम अमृत भरा पड़ा है। अब बालकृष्ण बड़े हो गये थे। एक दिन गोवर्द्धन पर्वत को उठाकर कृष्ण ने मूसलधार वर्षा से गायों तथा गोकुलवासियों की रक्षा करके इन्द्र के गर्व को तोड़ डाला।

एक दिन कृष्ण गोवर्द्धन के समीप गायें चराते थे। तब एक बुजुर्ग अपनी कांख में ढोल लिये आ पहुँचे और पूछा–"मैं ने सुना है कि यहाँ पर कृष्ण नामक एक बालक है और बहुत अच्छे ढंग से मुरली बजाता है! मैं उस मुरली की ध्वनि सुनने आया हूँ। क्या तुम कृष्ण का पता बता सकते हो?"

"महाशय, मैं ही वह छोटा-सा कृष्ण हूँ। आप तो कोई मृदंग के बड़े विद्वान मालूम होते हैं। कृपया अपना परिचय दीजिए!" कृष्ण ने हाथ जोड़कर पूछा।

"मुझे मृदंग केसरी पुकारते हैं। मैं दक्षिण का निवासी हूँ और मथुरा नगर को जा रहा हूँ। सुना है कि कंस धनुर्याग करने वाले हैं। उस वक्त मैं अपने मृदंग की विद्वत्ता प्रदर्शित करना चाहता हूँ।" उस बुजुर्ग ने जवाब दिया।

उस बुजुर्ग के पैर में रत्न खचित कड़े, हाथों में सिंह के सिर की आकृति वाले आभूषण, कंठ में सोने के नीबू के बराबर वाले मनकों की माला तथा कानों में बड़े-बड़े स्वर्ण कुंडल चमक रहे थे। मृदंग पर नव रत्न खचित बहुत सारे स्वर्ण पदक बिठाये गये थे।

कृष्ण उन्हें देख आश्चर्य प्रकट करते हुए बोले–"महानुभाव! मैं गाय चराने वाला एक साधारण गोप बालक हूँ। मेरी मुरली साधारण बांस का टुकड़ा है। आप के दक्षिण के विद्वान ताल के लिए प्रसिद्ध हैं। मैं तो किसी साधारण राग का आलाप करते गायों को चराने वाला गायक हूँ।'

(और है।)

[२]

हसन ने जब अपनी कहानी समाप्त की, तब उस को पालनेवाली युवती ने अपनी कहानी उसे यों सुनाई :

"हम सब सात बहनें एक गंधर्व राजा की पुत्रियाँ हैं। वैसे हम सब एक पिता की संतान जरूर हैं, मगर एक माँ की संतानें नहीं। उन सब में मैं और मेरी एक दीदी छोटी हैं। बाक़ी हमारी पाँचों दीदियाँ शिकार खेलने गई हुई हैं, वे जल्द ही लौट अयेंगी। मेरे पिताजी का विचार है कि हम सब बहनों के साथ विवाह करने की योग्यता रखने वाले इस सृष्टि के भीतर कोई नहीं है। इसलिए उन्होंने यह निर्णय लिया कि हम शाश्वत रूप से कन्याएँ ही बन कर रहें, इस वास्ते हमारे निवास के हेतु इस कोने में यह भवन बनवा लिया है। यह प्रदेश वास्तव में बड़ा ही मन मोहक है। जल से समृद्ध है। जहाँ भी देखो, फल और पुष्पों के पेड़-पौधे हैं। सुंदर सरोवर हैं। उन में राजहंस तैरते हैं। स्वर्ग जैसे इस प्रदेश में हम सब बडी सुखी हैं। पर हमारे लिए एक ही बात की कमी थी। बहुत समय बीत जाने पर भी हमें नये चेहरे दिखाई नहीं दे रहे थे। भाग्यवश तुम यहाँ पर आये; इसलिए हमारी वह कमी पूरी हो गई। यह हमारे लिए बड़ी खुशी की बात है।"

वह युवती अपने छोटे भाई के साथ यों बातचीत कर ही रही थी कि इस बीच बाक़ी पांचों राजकुमारियाँ शिकार से लौट आईं। अचानक उन्हें एक छोटे भाई के मिल जाने पर वे भी बड़ी खुश हुईं और उसके द्वारा यह वचन लिया कि वह बहुत समय तक उनके साथ ही रहेगा।

हसन वहाँ के विचित्र दृश्यों को देखते उन गंधर्व राजकुमारियों के साथ रहते, उनके साथ सैर व शिकार खेलने जाने लगा। वह उन बड़ी-बहनों को देख जैसे खुश था, वैसे वे भी अपने छोटे भई से खुश थीं। नदी-नाले, बाग-बगीचों में खेलते आपस में नई बातें जानते वे आठों एक ही माता के बच्चों जैसे परस्पर प्रेमपूर्वक रहने लगे।

एक दिन सब लोग झाड़ियों के बीच बैठ कर गीत गा रहे थे, तभी अचानक धूल उठी और सारे आसमान में फैल गई। उसी वक्त बादलों के गर्जन जैसी कोई ध्वनि हुई। राजकुमारियाँ सब सहमी हुई सी हसन से बोलीं–"भैया, तुम जल्दी कहीं जाकर छिप जाओ!" यों समझाकर सब से छोटी राजकुमारी हसन का हाथ पकड़ कर उसे खींच ले गई और बगीचे में एक जगह उसे छिपा दिया।

शीघ्र ही गंधर्वों का एक दल आकर उस महल के समीप उतरा। दूसरे गंधर्व राजा के सम्मानार्थ राजकुमारियों का पिता कोई दावत दे रहा था। इसलिए अपनी पुत्रियों को बुला लाने के वास्ते अपने परिवार को भेजा था। यह खबर मिलते ही आखिरी राजकुसारी हसन के पास आई और बोली–"भैया, तुम को अकेले छोड़ हमें थोड़े दिनों के वास्ते दूसरी जगह जाना पड़ रहा है। लो, ये चाभियाँ ले लो। हमारे लौटने तक यह सारा महल तुम्हारा ही है। मगर एक बात याद रखो। इस चाभी के द्वारा खुलने वाले कमरे में मत जाओ।" इन शब्दों के साथ नील रत्न जड़ित चाभी उसे दिखा दी।

इसके बाद सातों राजकुमारियाँ हसन से विदा लेकर उन्हें ले जाने के लिए आये हुए परिवार के साथ अपने पिता के घर चली गईं।

राजकुमारियों के चले जाने पर हसन को वह सारा महल सूना-सूना मालूम होने लगा। हसन व्याकुल हो सारे कमरों में

घूमता रहा और अपनी बहनों के द्वारा इस्तेमाल की जानेवालीं चीज़ों को देख दुखी होने लगा। घूमते-घामते वह उस दर्वाजे के पास पहुँचा, जिसे खोलने से उसकी बहनों ने उसे मना किया था। जब उसे याद आया कि उस दर्वाजे को खोलना नहीं चाहिए, तब वह वापस चला गया।

मगर उसके दिमाग में खलबली सी मच गई। एक साथ कई शंकाएँ उठीं—"इस दर्वाजे के न खोलने का कारण क्या हो सकता है? चाहे जो हो, उस कमरे में न पहुँचने का मैं ने बहनों को वचन दिया है।" यों विचार करने के बावजूद भी वह उस दर्वाजे की बात भूल नहीं पाया। इसी फ़िक्र के कारण उसे नींद न आई। आखिर वह इस निर्णय पर पहुँचा कि चाहे जो हो, वह दर्वाजा खोल कर देखूँगा। पहले सुबह तक रुकने को सोचा, फिर निश्चय किया—"चाहे मेरी जान चली जाय, उस दर्वाजे को खोल कर देखना चाहिए कि वहाँ पर क्या है?"

हसन एक चिराग लिये उस दर्वाजे के पास पहुँचा और चाभी से खोल दिया। तब हसन ने निडरता के साथ कमरे के अंदर क़दम रखा।

उस कमरे के भीतर लकड़ी का सामान, कालीन, चटाई या कोई चीज न थी।

कमरा एक दम खाली था, एक कोने में एक सीढ़ी पड़ी थी जो कमरे की छत पार कर ऊपर तक गई थी। हसन अपने हाथ का चिराग नीचे रख कर चौकन्ने हो धीमी चाल से सीढ़ी चढ़कर छत के छेद में से ऊपर चला गया।

ऊपर का हिस्सा समतल था। हसन को वहाँ पर एक छोटा सा बाग दिखाई दिया। उस में फूलों के पौधे थे। जब उसने बगीचे में क़दम रखा, तब उसे एक मनोहर अद्भुत दृश्य दिखाई दिया। उसके सामने एक निर्मल सरोवर आईने की भांति प्रतिबिंबित हो रहा था। सरोवर के उस पार एक विचित्र महल था। उसके बुर्ज

इतने ऊँचे थे, मानो आसमान में घुस गये हो। उस महल और सरोवर के बीच संगमरमर तथा नक्षत्र शिलाओं से निर्मित सीढ़ियाँ थीं। सीढ़ियों के नीचे पानी के ऊपर तक एक चबूतरा फैला था। -वह चबूतरा माणिक, पुष्पराग, सोना व चाँदी के पाटों से बनाया गया था। उस चबूतरे पर चार गुलाबी रंग की स्फटिक शिलाओं से निर्मित स्तम्भ, तथा उन पर बिछाया गया हरे रंग का वस्त्र, उसके नीचे एक सुंदर सिंहासन भी थे। उनके निर्माण में जो कौशल दिखाई देता है, वैसा निर्माण कराना बड़े-से बड़े राजाओं के लिए भी मुमकिन नहीं है।

हसन एक शिला प्रतिमा की भांति खड़े हो उस अद्भुत दृश्य को देख आनंद लूट रहा था, तब दस बड़े बड़े पक्षी आसमान से उड़ते आकर उस सरोवर के किनारे उतर पड़े। थोड़ी देर तक किनारे पर इधर-उधर टहलने के बाद उन में से सब से बड़ा पक्षी–सिंहासन तक चल कर आया। बाकी नौ पक्षियों ने उस का अनुसरण किया।

हसन चकित हो उनकी ओर देख ही रहा था कि इतने में वे अपने बदन पर पड़े पक्षियों के खोल खोलकर औरतों की आकृति में बाहर आ गईं। हर एक स्त्री एक चन्द्रबिंब जैसा दिखाई दे रही थी। सबने जब पक्षी-आकृति के अपने खोल उतार दिये, तब सरोवर में कूदकर नहाने लगीं। वे एक दूसरे का पीछा करते हंसने लगीं। उनकी हंसी से सारी दिशाएँ गूँज उठीं। उन सब में ज्यादा चतुर एक सुंदरी ने हसन को अपनी ओर आकृष्ट किया। वह एक झाड़ी के पीछे छिप कर उस सुंदरी की ओर निर्निमेष दृष्टि से देखता रह गया।

उन कन्याओं ने शीघ्र ही स्नान समाप्त कर पतले वस्त्र धारण किये। इतने में किसी ने कहा–"सवेरा होने को है, क्या हम चले जायें?"

दूसरे ही क्षण सभी सुंदरियाँ अपने पक्षी की आकृति के खोल धारण कर एक साथ आसमान में उड़ गईं।

उनके जाने के बाद भी बड़ी देर तक हसन शून्य आकाश में देखते खड़ा रहा, तब तक हसन जानता न था कि प्यार क्या होता है? उसने जब प्यार का मतलब समझ लिया, तब उसे लगा कि उस की सारी जिंदगी सूना है। उसने दिन का समय एक युग जैसा बिताया और रात के होते ही फिर सरोवर के पास लौट आया। पर उस रात को कन्याएँ वहाँ पर न आईं। दूसरे दिन रात को भी वे न आईं। हसन निद्रा, जल और अन्न त्याग कर निराशा में डूब गया और सोचने लगा—"इस तरह जीने की अपेक्षा मरना कहीं बेहतर है।" यों सोचते वह दिन ब दिन दुबला होता गया और उसने खाट पकड़ ली।

दस दिन बाद गंधर्व राजा की पुत्रियाँ अपने पिता के घर से लौट आईं। लौटने की देर थी, बस, हसन की दीदी उसे खोजते आ पहुँची और उस का बुरा हाल देख आँखों में आँसू भर कर बोली—"भैया, तुम्हारा हाल ऐसा क्यों हो गया है? तुम्हारा चेहरा पीला पड़ गया है। तुम्हारी आँखें धँस गई हैं। बिना मुझसे छिपाये सच्ची बात बतला दो कि आखिर तुम्हारी बीमारी क्या है?"

हसन भी आँखों में आँसू भर कर बोला—"दीदीजी, मैंने जो गलती की, उसकी सजा भोग रहा हूँ। अब कोई भी मेरी मदद नहीं कर सकता? मैं इसी तरह अपने प्राण छोड़ दूँगा।"

"ऐसा कभी मत सोचो, भैया? तुम्हारे प्राण बचाने के लिए हम सब बहनें हंसते हुए हमारे प्राणों की बाजी लगाने को तैयार हैं। अगर तुम मर गये तो मैं भी जरूर मर जाऊँगी।" हसन की दीदी ने कहा।

"मैं दस दिन से उपवास करता हूँ। मैं ने अन्न-जल त्याग दिया है।" इन शब्दों के साथ हसन ने सारा वृत्तांत अपनी दीदी को सुनाया। (और है)

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २५)

पुरस्कृत परिचयोक्तियां मार्च १९८२ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी।

M. Natarajan

★

D. R. Mohan Rao

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्दों की हों और परस्पर संबंधित हों।

★ जनवरी १० तक परिचयोक्तियां प्राप्त होनी चाहिए, उसके बाद प्राप्त होनेवाली परिचयोक्तियों पर विचार नहीं किया जाएगा।

★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) २५ रु. का पुरस्कार दिया जाएगा।

★ दोनों परिचयोक्तियाँ कार्ड पर लिखकर (परिचयोक्तियों से भिन्न बातें उसमें न लिखें) निम्नलिखित पते पर भेजें: चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६

नवम्बर के फोटो-परिणाम

प्रथम फोटो : **कारवाँ रुक गया!**

द्वितीय फोटो : **झील का जल मिल गया!!**

प्रेषक : **ओम उपाध्याय,** ३०, गोविंदवल्लभ पंत मार्ग मण्डलेश्वर (प. निमाड) (म.प्र.)

पुरस्कार की राशि रु. २५ इस महीने के अंत तक भेजी जाएगी।

Printed by B. V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for CHANDAMAMA CHILDREN'S TRUST FUND (Prop. of Chandamama Publications) 188, Arcot Road, Madras-600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

चन्दामामा

एवं

चदामामा क्लासिक्स और कॉमिक्स

की ओर से
अपने पाठकों को
नव वर्ष की
हार्दिक शुभकामनाएँ

1982

निर्देशन : विजया रेड्डी संगीत : राजेश रोशन

कॅमल

वॉटर कलर्स और पोस्टर कलर्स

मीना का जन्मदिन था. राजू के लिए यह खुशी का मौका था. मंजू, विनय, रेखा, अशोक सभी बच्चे शानदार तोहफे लाने वाले थे.

राजू की समझ में नहीं आ रहा था कि वह क्या दे. वह कोई खास चीज़ देना चाहता था, जो सबसे अलग नज़र आये.

उसने बहुत देर तक इस बारे में सोचा. अचानक उसके दिमाग में एक बात आई.

उसने सोचा— क्यों न एक अच्छा सा मुखौटा बना कर दिया जाए? जिसकी टोपी में हरी पट्टियाँ हों, गालों पर गुलाबी रंग और लाल-लाल होंठ.

उसने जल्दी-जल्दी में गत्ते का एक टुकड़ा लिया और ब्रश से उस पर तेज़ हाथ चलाये. फिर क्या था— मुखौटा तैयार हो गया. उसने उसे काटकर रख लिया.

मीना ने जब उस रंग-बिरंगे तोहफे को देखा, तो वह खुशी से नाच उठी. हर कोई राजू और उसके तोहफे की तारीफ़ कर रहा था. अगर राजू रंगने का काम कर सकता है तो तुम क्यों नहीं?

कॅम्लिन प्रायव्हेट लिमिटेड

आर्ट मटीरियल डिविज़न,

बम्बई-४०० ०५९.

कैम्लिन अनब्रेकेबल पेन्सिल बनानेवालों की ओर से